शीराज़ा

हिन्दी

जे० एंड के० अकादमी ऑफ आर्ट, कल्चर एंड लैंग्वेजिज़, जम्मू

द्विमासिक

हिन्दी

अंक : 2

जून-जुलाई 1994

वर्ष : 30

पूर्णांक 124

प्रमुख सम्पादक
प्रो० रीता जितेन्द्र

सम्पादक
डॉ० उषा व्यास

संपर्क : सम्पादक, शीराजा हिन्दी, जे० एंड के० अकादमी ऑफ आर्ट कल्चर
एंड लैंग्वेजिज़ जम्मू।
फ़ोन : 47643 : 49576

मूल्य : 2 रुपये

वार्षिक : 10 रुपये

प्रकाशक : प्रो० रीता जितेन्द्र, सेक्रेटरी, अकादमी ऑफ आर्ट कल्चर
एंड लैंग्वेजिज़ जम्मू 180001

मुद्रक : रोहिणी प्रिंटर्ज़, कोट किशन चन्द जालन्धर।

भीतरी पन्नों पर—

लेख

नोबल पुरस्कार विजेता महिलाएं

□ आशा रानी व्होरा

नोबल पुरस्कार !

विश्व का सर्वोच्च प्रतिष्ठा पुरस्कार, जो व्यक्तित्व या नेतृत्व पर नहीं, केवल कृतित्व पर प्रदान किया जाता है। जिज्ञासा स्वाभाविक है कि आज तक यह पुरस्कार संसार की कितनी व किन महिलाओं को उनके किस कृतित्व पर मिला ? महिला-उपलब्धियों के क्षेत्र में शोध करते हुए मेरी दिलचस्पी इस ओर भी केन्द्रित हुई थी। पहला नोबल पुरस्कार 1901 में दिया गया था और प्रथम बार किसी महिला को 1903 में।

विज्ञान में पुरस्कार :

प्रथम पुरस्कार (1903) की विजेता थीं, पोलेंड की सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक मैडम मेरी क्यूरी, जिन्हें आज सारा संसार 'रेडियम महिला' के नाम से जानता है और जिनसे सारा विज्ञान जगत प्रेरणा ग्रहण करता है। मैडम क्यूरी नोबल पुरस्कार प्राप्त करने वाली विश्व की प्रथम नारी ही नहीं अपितु वही एकमात्र ऐसी महिला थीं, जिन्हें अपने जीवन में दो बार नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। प्रथम बार 'भौतिकी' में अपने पति श्री पियरे क्यूरी तथा एक अन्य भागीदार श्री हेनरी बैकरेस के साथ और दूसरी बार 1911 में रसायन में अकेले। प्रथम बार पुरस्कार ग्रहण करते समय उनकी आयु 35 वर्ष की थी, द्वितीय बार 43 वर्ष की। इस दृष्टि से सबसे कम आयु में पुरस्कृत होने वाली महिला भी वे ही थीं।

मैडम क्यूरी की संसार को देन है : पोलोनियम, रेडियम और रेडियोधर्मी विकिरणों का ज्ञान।

पोलैंड की आइरीने जूलियट 1935 की रसायन पुरस्कार विजेता मेरी क्यूरी की लड़की थीं, जिन्होंने अपने पति फ्रेडरिक जूलियट—मेरी क्यूरी के असिस्टेंट के साथ मिल कर

क्यूरी दम्पति के रेडियोधर्मी तत्वों की खोज को आगे बढ़ाया और संयुक्त रूप से उत्पादन किया। अपनी मां मेरी क्यूरी की तरह पुरस्कार प्राप्त करते समय आइरीन क्यूरी की आयु भी केवल 38 वर्ष थी।

अमेरिकन दम्पति गर्टी थरेसा कोरी (1947 का चिकित्सा विज्ञान पुरस्कार) और उनके पति कार्ल कोरी ने मधुजन के अणु की रचना का पता लगाया। मधुजन की उत्प्रेरणा और परिवर्तन संबंधी उनके अनुसंधान पर उन्हें शरीर विज्ञान व चिकित्सा का नोवल पुरस्कार संयुक्त रूप से प्रदान किया गया। उनकी यह नई खोज 'कोरी चक्र' के नाम से प्रसिद्ध हुई। पुरस्कार प्राप्त करने समय गर्टी थरसा कोरी की आयु 51 वर्ष थी।

मारिया ज्योपर्ट मेयर (1963 का भौतिकी पुरस्कार) जन्म से पोलिश थीं, अमेरिकन प्रोफेसर जोजफ ऐडवर्ड मेयर से विवाह के बाद उन्होंने अमेरिकी नागरिकता ग्रहण की व वहीं बस गईं। पति भी वैज्ञानिक थे, पर उनकी परमाणु के ढांचे संबंधी खोज में वे नहीं, अन्य वैज्ञानिक भागीदार थे। नोबल पुरस्कार में उनके साथ थे—ले० एच० डी० जेन्सन और डा० यूजीन पाल विगनर। उनकी 'न्यूक्लिअस शैल थियोरी' और न्यूट्रान की 'जादुई संख्याएं' प्रसिद्ध हैं। पुरस्कार के समय उनकी आयु 57 वर्ष थी।

इंग्लैंड की डोरा थी क्रोफ्ट होजकिन (1964 का रसायन पुरस्कार) ने इंसुलिन, पेनीसिलिन जैसे प्राकृतिक उत्पादनों पर कार्य करते हुए उनका क्ष-किरण विश्लेषण किया। उनका मुख्य विषय था : मणिम विज्ञान या 'एक्स-रे क्रिस्टलोग्राफी', जिसमें उनकी रुचि दस वर्ष की आयु से ही हो गई थी। अपने विश्लेषण कार्य पर नोबल पुरस्कार प्राप्त करते समय उनकी आयु 54 वर्ष थी और मृत्यु के समय 70 वर्ष।

डा० रोजलीन एस० यैलो (1976 का चिकित्सा विज्ञान पुरस्कार) ने रक्त में हार्मोनों की अल्पमात्रा मालूम करने के लिए रेडियो विधि का पता लगाया था। चिकित्सा विज्ञान में इस पुरस्कार में उनके भागीदार थे, डा० रोजर गुलेमिन तथा डा० एण्ड्रयूज़ शाली। इन दोनों ने भी मस्तिष्क में हार्मोन-उत्पादन विषयक खोज की थी। लेकिन पुरस्कार-राशि का आधा भाग डा० यैलो को मिला था और शेष आधा इन दोनों डाक्टरों को। इससे जाहिर है कि हार्मोन विज्ञान पर दिए गए चिकित्सा नोवल पुरस्कार में डा० यैलो के काम का महत्व अधिक आंका गया।

1983 और 1986 के दोनों चिकित्सा नोबल पुरस्कार औषधि विज्ञान में नई खोजों के लिए दिए गए। डा० बारबरा मैकलिनटाक को प्रजनन-विज्ञान में महत्वपूर्ण शोध के लिए और रीटा लेवी मांटेलसिनी को कोशिकाओं और अवयवों के विकास को नियमित करने वाली प्रणाली में नई खोज के लिए। इन वैज्ञानिक महिलाओं में से डा० बारबरा मैकलिनटाक ही ऐसा नाम है, जिन्हें पुरस्कार की पूरी राशि मिली, किसी के साथ आधी बटी हुई नहीं।

विश्व-शांति पुरस्कार :

1905 में दूसरी बार और 'विश्वशांति' में प्रथम बार पुरस्कार प्राप्त करने वाली महिला थीं—श्रीमती बर्था वान सट्नर। बर्था वान सट्नर एक आस्ट्रेलियन उपन्यासकार थीं, इस उपन्यास से अधिक वे महान शांतिवादी के रूप में विख्यात हुईं।

कहते हैं, नाइट्रो ग्लैसरीन और डाइनामाइट जैसे विस्फोटकों के आविष्कारक अल्फ्रेड नोबल को विश्वशांति की ओर मोड़ने और शांति के लिए पुरस्कार निर्धारित करने की प्रेरणा देने वाली बर्था वान सट्नर ही थीं। अल्फ्रेड नोबल के जीवन में तीन युवतियां आईं। उनकी प्रथम प्रेमिका अल्पायु में ही काल-कवलित हो गई, जिसे भावुक अल्फ्रेड जीवन भर नहीं भूल सके। दूसरी बार, जब वे अपार सम्पत्ति और वैभव के स्वामी बन चुके थे, उन्होंने बर्था वान सट्नर को इस वैभव के उपयोग का सहभागी बनाना चाहा, पर उन्हें यह जानकर बेहद निराशा हुई कि बर्था वान सट्नर इसके पूर्व ही किसी और से प्रेम करती थीं। इसी प्रकार तीसरा प्रकरण भी उनके लिए दुखदायी साबित हुआ और अल्फ्रेड जिंदगी में कहीं बंध सके तो केवल अपनी मां की गोद से, जिसे वे बेहद प्यार करते थे। बर्था वान सट्नर अल्फ्रेड नोबल के जीवन में बहुत थोड़ी देर के लिए आई, पर जीवन भर के लिए उन पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ गईं। मित्रता के नाते उनका पत्र-व्यवहार बराबर चलता रहा। अल्फ्रेड नोबल उनके शांति-प्रयत्नों का बराबर अध्ययन करते रहे। फिर जब उनका प्रसिद्ध उपन्यास 'ले डाउन आर्मस...हथियार डाल दो...प्रकाशित हुआ तो उसने अल्फ्रेड नोबल को भी बेहद प्रभावित किया।

उपन्यास की प्रशंसा करते हुए उन्होंने वान सट्नर को लिखा था, 'मैं चाहता हूं, किसी ऐसे विस्फोटक का निर्माण करूं या कोई ऐसी मशीन बनाऊं कि आमने-सामने युद्धार्थ खड़ी सेनाएं एक सैकिंड में एक दूसरी का सर्वनाश कर दें। तभी सभ्य कहलाने वाली जातियों की आंखें खुलेंगी और वे युद्ध करना छोड़ देंगी।" इसके कुछ दिन बाद ही उन्होंने फिर वान सट्नर को लिखा, "मैं अपनी सम्पत्ति का एक भाग एक पुरस्कार के लिए रख देना चाहता हूं। प्रति पांचवें वर्ष यह पुरस्कार उस व्यक्ति को दिया जाए, जो संसार से युद्ध का समूल विनाश करने के लिए महत्वपूर्ण काम करे या इसके पक्ष में जोरदार आवाज़ उठाए। तीस वर्षों में कुल छः बार यह दिया जाए। यदि इतनी लम्बी अवधि के बाद भी राष्ट्र अपना रवैया नहीं बदलेंगे तो वे बर्बरता की सीमा पर पहुंच जायेंगे। तब पुरस्कार को जारी रखने का कोई अर्थ न रह जाएगा।"

यह थी, 'ले डाउन आर्मस की प्रेरणा और 'शांति नोबल पुरस्कारों' की भूमिका। आगे चल कर विश्वशांति के लिए दिया जाने वाला पहला पुरस्कार बर्था वान सट्नर को ही उनके इसी उपन्यास पर प्रदान किया गया—उनके लेखिका रूप को नहीं, शांति के लिए उठाई गई उनकी जोरदार आवाज को। पुरस्कार प्राप्त करने के समय उनकी आयु 62 वर्ष की थी।

विश्व शांति के प्रयासों के लिए पुरस्कृत दो अमेरिकन महिलाएं हैं: जेन एडम्स (1931), एमिली बाच (1946)। जेन एडम्स अपनी 'पीस-पार्टी' तथा 'हल-हाउस' नामक कल्याण संस्था के कारण विश्वविख्यात हुईं। 'हल-हाउस' के बाहर लिखा रहता था, 'आप भूखे हैं तो यहां आएं, भोजन ग्रहण करें। आप थके हैं तो यहां आएं, विश्राम करें।' पर भूख, धन या भोजन की ही नहीं होती, स्नेह, शांति और मैत्री की, सहानुभूति और सद्भावना की भी होती है। उनकी 'गुड नेबर पालिसी' इसी पर विचार-गोष्ठियां आयोजित करती थी और उनकी 'पीस-पार्टी' हर जोखिम उठा कर युद्ध का विरोध किया करती थी। जेन एडम्स की मृत्यु 75 वर्ष की आयु में 1935 में हुई। नोबल पुरस्कार उन्हें केवल चार वर्ष पूर्व 1931 में मिला था—निकोलस मरे बटलर के साथ आधा विभाजित करके।

यह पुरस्कार एमिली बाल्च को वाई० एम० सी० ए० के लीडर जोन आर मांट के साथ आधा बांट कर दिया गया। एमिली बाल्च का नाम 'वीमेंस इंटरनेशनल लीग फार पीस एंड फ्रीडम' के साथ जुड़ा था, जिस की आज विश्व भर में शाखाएं हैं। जेन एडम्स के साथ वे भी इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की इक संस्थापिका थीं उनके अध्यक्षता-काल में महामंत्री रहीं, फिर जेन एडम्स की मृत्यु के बाद वे ही अध्यक्षा बनीं। इस संस्था के माध्यम से उन्होंने हमेशा सैनिकवाद का विरोध किया और निरस्त्रीकरण व शांति के पक्ष में आवाज़ बुलंद की। भ्रमण, व्याख्यान, प्रपत्र, लेखन, सम्मेलन, प्रतिनिधिमंडल, प्रस्ताव और प्रतिवेदन—सभी माध्यमों से राजनीतिक स्तर पर अपनी आवाज़ बुलंद करने के साथ उन्होंने अपनी लीग का सन्देश स्कूलों के विद्यार्थियों और गृहिणियों तक पहुंचाने के भी व्यापक प्रयत्न किए। एक समाजशास्त्री के नाते ऐसे अध्ययनों पर आधारित उन की पुस्तकें काफी लोकप्रिय हुईं—'अवर स्लेविक फैलो सिटीजन्स', 'पब्लिक असिस्टेंट्स आफ द पुअर इन फ्रांस', 'रिफ़्यूजीज़ एज़ एसेट्स' आदि। उनके कविता-संग्रह का भी नाम है, 'द मिराकल्स आफ लिविंग'।

आयरलैंड की बेट्टी विलियम्स को प्रोटेस्टेंटों और कैथोलिकों के स्थायी झगड़ों के कारण समय-समय पर होने वाले दंगों व हिंसा के विरुद्ध मानवीय पक्ष में आवाज उठाने पर 1976 का नोबल शांति पुरस्कार प्रदान किया गया था। इस पुरस्कार में उनकी सह-भागिनी थीं, उन तीन मृत बच्चों की आंटी मिस आइरीट कोरिगन, जिन की एक दंगे के दौरान भगदड़ में तेज वाहन से कुचले जाकर मृत्यु हो गई थी और यह दुर्घटना बेट्टी विलियम्स को पहले विचलित व फिर हिंसा के खिलाफ जोरदार आंदोलन छेड़ने के लिए प्रेरित कर गई थी। मिस माइरीड कैरिगिन ने पूरे आंदोलन में बेट्टी विलियम्स का निरन्तर साथ दिया था, इसलिए उन्हें पुरस्कार का एक अंश प्रदान किया गया था। 1979 के नोबल शांति पुरस्कार से सम्मानित भारत में बसी विश्व-नागरिक एवं मानवता की सेवा को समर्पित करुणा-मूर्ति मदर टेरेसा के बारे में सभी जानते हैं। परमाणु निरस्त्रीकरण के लिए निरन्तर आवाज बुलंद करने पर स्वीडन की श्रीमती अल्वा मिर्डल को 1982 के पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

1991 के 'नोबल शांति पुरस्कार' से सम्मानित बर्मी विपक्षी दल की नेता सुश्री आंग सान सू ची को उनके कृतित्व 'सिविलयन करेज' और 'अहिंसक संगठन' के लिए दिया गया। किन्तु इंग्लैण्ड से अपने देश म्यॉमार (बर्मा) की स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ने वाले जनरल आंग सान की बेटी सू ची जैसे ही 1988 में अपनी मरणासन्न मां की देखभाल के लिए स्वदेश लौटीं कि अपने घर में नजरबंद कर दी गईं। यह दुबली-पतली विदुषी युवती तब से लेकर आज तक नज़रबन्द हैं। उन की रिहाई के लिए दुनिया भर की अपीलों, मानवाधिकार प्रस्तावों के बावजूद, म्यॉमार के फौजी तानाशाह उन्हें रिहा नहीं कर रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय भारी दबाव पड़ने पर उन्होंने रिहाई की शर्त रखी है कि रिहा होने के साथ ही वे देश छोड़ दें और अपने पिता के पास इंग्लैण्ड चली जाएं; वे शायद सू ची को दलाई लामा बना देना चाहते हैं। लेकिन गांधीवादी मूल्यों से प्रेरित सू ची सत्याग्रह पर डटी हैं। सू ची की पार्टी 'नेशनल लीग फार डैमोक्रैसी' को 1990 के आम चुनावों में भारी बहुमत मिला था, लेकिन अपने घर में नजरबंद सू ची की पार्टी को जनरल विन ने सत्ता में नहीं आने दिया था। सू ची को विश्वास है कि नेलसन मंडेला की तरह एक दिन म्यॉमार

में भी लोकतंत्र की हवा बहेगी, उनके संकल्प साकार होंगे और आने वाला समय उनका होगा।

साहित्य पुरस्कार

1909 में तीसरी बार और साहित्य में प्रथम बार पुरस्कार प्राप्त करने वाली स्वीडिश लेखिका थीं —सेलमा लागरलोफ। साढ़े तीन वर्ष की आयु में ही लकवे की शिकार हो, हमेशा के लिए लंगड़ी हो जाने वाली बालिका सेलमा ने साहित्य पठन-पाठन और लेखन के माध्यम से अपनी हीन भावना को निष्कासन की राह दी—और यह माध्यम उसकी प्रतिभा की परतों को उद्घाटित करता चला गया। सेलमा के साहित्य में अपने ग्रामीण अंचल की सोंधी सुगन्ध है---पूरी मार्मिकता और जीवंत कल्पना शक्ति, उच्च आदर्शवाद और आत्मीयता बोध के साथ। उन की रचनाओं में लोग, जीवन, लोक-संस्कृति एवं 'घर' का प्रमुख स्थान है। इसलिए एक सरलता, सादगी और सहज प्रवाह भी।

उनकी सर्वाधिक लोकप्रिय कृतियां हैं—'गोस्टा बर्लिंग की कहानी' और 'लिलिक्रोना का घर'। फक्कड़ कवि और लोकगायक गोस्टा बर्लिंग की कहानी वहां इसी तरह घर-घर में जानी जाती है जैसे हमारे यहां 'ढोला मारू' की कहानी। बेला बजाने बाली लड़की लिलिक्रोना भी ऐसा ही एक मधुर चरित्र है। सोलह कृतियों की रचयिता कुमारी सेल्मा लागरलोफ 51 वर्ष की आयु में पुरस्कार ग्रहण करने से पूर्व ही चर्चित और लोकप्रिय हो चुकी थीं। पुरस्कार के बाद जब उन्हें स्वीडिश अकादमी की सदस्या मनोनीत किया गया तो विश्व में यह सम्मान पाने वाली वे प्रथम महिला थीं।

ग्रेजिया डेलेडा (1926) इटली की विख्यात कथा-लेखिका थीं, जिन्होंने अपनी जन्म-भूमि सार्डीनिया की पृष्ठभूमि में ही अपने प्राय: सभी उपन्यासों, कहानियों की रचना की। उन की अधिकांश कहानियां दुखांत हैं, पर मानवीय सम्वेदना और सहानुभूति की गहराई के साथ उच्च आदर्शों से प्रेरित। 51 वर्ष की आयु में नोबल पुरस्कार पाने वाली ग्रेजिया डेलेडा की अधिक प्रसिद्ध कृतियां हैं: 'फ्लावर आफ सार्डीनियां', 'नोस्टाल्जिया', 'टू मिराकल्स', 'रीड्स इन द विंड', 'दि मदर' तथा 'एशेज़'।

नार्वेजियन उपन्यास-लेखिका सिग्रिड अनसेट (1928) के अधिकांश उपन्यासों का कथाकाल 14वीं-15वीं शताब्दी और घटनास्थल नार्वे है। फिर भी सार्वजनीन अपील व दिलचस्पी की उनमें कमी नहीं। चरित्र-चित्रण की सजीवता, विचित्रता, अद्भुत रचना-कौशल और सूक्ष्म मनोविश्लेषण के कारण उनके भारी-भरकम उपन्यास भी खूब पढ़े गए। उपन्यासों के अलावा, उन्होंने घर-परिवार और महिला-समस्याओं पर भी खूब लिखा है। नारी जीवन की उनकी कल्पना परम्परागत भारतीय नारी-जीवन के समान है, जिसमें वे मां, पत्नी व गृहिणी के स्वरूप और कर्त्तव्य को प्रमुख स्थान देती हैं। उनके बारे में प्रसिद्ध है कि 46 वर्षीय अनसेट को नोबल पुरस्कार की सूचना मिलने के बाद पत्रकारों का एक दल जब उन की प्रतिक्रिया जानने के लिए उनसे मिला, जब वे अपने सबसे छोटे बच्चे को सुला रही थीं। उन्होंने ऐसे समय भी अपने मातृत्व के कार्य में बाहरी हस्तक्षेप पसन्द नहीं किया और अपने बच्चे का समय छीनकर पत्रकारों को देने से इंकार कर दिया। सन् 1982 में उनकी जन्म शताब्दी विश्व भर में मनाई गई थी।

चीनी जन-जीवन का जीवंत चित्रण करने वाली अमेरिकन लेखिका पर्ल बक (1938) के नाम से हिन्दी संसार अच्छी तरह परिचित है। उनकी पुरस्कार विजेता कृति 'गुड अर्थ' तथा अनेक कृतियां हिन्दी में अनुवादित हैं। 46 वर्ष की आयु में पुरस्कार पाने वाली पर्ल बक ने विश्व की नोवल-पुरस्कार विजेता महिला साहित्यकारों में सर्वाधिक लोकप्रियता अर्जित की थी उन की चुनी हुई कृतियों का विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

चिली की कवयित्री ग्रेबीला मिस्त्राल (1945) दक्षिण अमरीका की पहली साहित्यकार थीं, जिन्हें यह पुरस्कार मिला। उनके गीति-काव्य एक लम्बे अरसे तक लैटिन अमरीकियों के आदर्श प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं। उन की रचनाओं की संख्या अधिक नहीं, पर जो हैं, उनमें से अधिकांश बहुत सशक्त मानी गई हैं। 'नोबल, द मैन एंड हिज़ प्राइज़ेज़' के लेखक ऐंडर्स आस्टलिंग के अनुसार, 'ग्रेबीला मिस्त्राल की वाणी में आप इस सुदूर देश की विश्वसनीय आवाज़ सुन सकते हैं।' उनकी कविताओं में एक संवेदनशील हृदय की भाव विह्वलता, आवेश, ममता और विद्रोह—सभी स्थितियां कलात्मक ढंग से उजागर हुई हैं। 56 वर्ष की आयु में नोबल पुरस्कार उन्हें 'सानेट्स आफ डेथ'—मृत्यु गीत—नामक रचना पर मिला। अपने दो प्रिय कवियों—ग्रेबिअल डिसन्जिया और फ्रैडरिक मिस्त्राल के नामों को मिलाकर उन्होंने अपना नाम रख लिया था। फिर उनका यही नाम प्रसिद्ध हुआ।

नेली शाख्स प्रथम यहूदी महिला थीं, जिन्हें 1966 का साहित्य पुरस्कार सैमुअल जोसेफ एग्नान के साथ आधा बांट कर मिला। जोसेफ एग्नान गद्य लेखक थे, नेली शाख्स कवयित्री। और संयोग कि दोनों की मृत्यु 1970 में हुई, जबकि पुरस्कार के समय एग्नान 89 वर्ष के थे, नेली शाख्स 75 वर्ष की, एक धार्मिक यहूदी परिवार से सम्बन्धित नेली के पिता जर्मनी के एक बड़े उद्योगपति थे, जिन्हें हिटलर की यहूदी विरोधी नीति के कारण जर्मनी छोड़ स्वीडन में बसना पड़ा था। नेली शाख्स की रचनाएं यहूदी यातनाओं और इज़राइल की दुखी जनता के मार्मिक चित्रण से ओतप्रोत हैं। पर गहन पीड़ा के वावजूद, वे कहीं तिक्त नहीं हो पाईं। उनके स्वर में आक्रोश नहीं, मानवीय सम्वेदना, आध्यात्मिक चिन्तन और कहीं-कहीं सन्तों का सा क्षमा-भाव है। इसीलिए उनकी रचनाओं को 'मानव आत्मा का स्वच्छ दर्पण' और उन्हें 'विराट की कवयित्री' कहा गया है।

साहित्य में 1991 का 'नोबल पुरस्कार' दक्षिण अफ्रीकी लेखिका नैदीन गॉडिगर को मिला। यह सम्मान पाने वाली वह तीसरी अफ्रीकी साहित्यकार हैं। रंगभेद के लिए कुख्यात दक्षिण अफ्रीका में यह गोरी (यहूदी) महिला अपने लेखन के साथ सक्रिय जीवन में भी निरन्तर रंगभेद का विरोध करती आई हैं। लेखिका होने के साथ वे अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस की सक्रिय सदस्य भी हैं। जोहंसवर्ग के निकट एक छोटे से खदान शहर में 1923 में जन्मी विख्यात अफ्रीकी साहित्यकार नैदीन गॉर्डिमर का नाम अफ्रीकी लेखकों की अग्रिम पंक्ति में लिया जाता है, जिन्होंने साहित्य का समाज से गहरा नाता समझा और सदियों से शोषण के शिकार अश्वेत अफ्रीकी मानस को वाणी दी। नैदीन गॉर्डिमर ने 'मैं क्या कर सकती थी?' 'सत्याग्रह', 'कौन-सा होगा वह नया जमाना'? 'कांच के गिलास का एक टुकड़ा', 'मेरे बेटे की कहानी' आदि सहित आठ उपन्यासों और लगभग इतने ही कहानी-संग्रहों की रचना की है। नोबल पुरस्कार उन्हें 'माई सन्स स्टोरी'—मेरे बेटे की कहानी के लिए दिया गया।

1993 का साहित्य पुरस्कार अमेरिकी उपन्यासकार और निबन्धकार टोनी मारिसन को दिया गया। एक अवधि बाद साहित्य में 'नोबल पुरस्कार' पाने वाली ये दोनों महिलाएं अश्वेत हैं और रंगभेद की मानसिकता के प्रति असहमति प्रकट करती हैं। इस का अर्थ यह भी है कि पश्चिमी दुनिया में अश्वेत लेखन को ही मान्यता नहीं दी गई, अश्वेत महिला लेखक भी इस अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के सर्वोच्च सम्मान से विभूषित की गईं। अश्वेत लेखिका टोनी मारिसन ने अमेरिकी अश्वेत आवाज को साहित्य में एक नया व सशक्त स्वर प्रदान किया है। उनके उपन्यासों में रूमानी उच्छवास नहीं है, रंगभेद के यथार्थ से भयावह मुठभेड़ करते हुए, जीवन-संघर्ष का साक्षात्कार है। उनके अपने शब्दों में, "मैं गांव का साहित्य लिखती हूं, लिखना अपने को पाने जैसा है। औद्योगिक क्रांति के बाद मध्यम वर्ग को अपने लिए नई आत्म छवि चाहिए थी, मैंने वही देने का प्रयास किया है।" □

कश्मीर इतिहास के यूनानी स्रोत

□ मोती लाल साकी

अनु० अर्जुन देव मजबूर

पूर्व और पश्चिम के बीच सम्बन्धों का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना कि स्वयं इतिहास। यह समझना कि पूर्व और पश्चिम के बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध के द्वार सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् ही खुले तो यह गलत है। पश्चिम से ही द्रविड़ यहां आए और एक उज्जवल सांस्कृतिक परम्परा स्थापित करके चलते-चलते दक्षिण पहुंचे और वहीं के हो गए। द्रविड़ों से पूर्व आस्ट्रिक यहां आए थे जिनका जिक्र "इनशाद" नामक संस्कृत ग्रंथों में आया है। पश्चिम के मार्ग से ही आर्य आए जिन्होंने सप्त-सिन्धु को अपना केन्द्र बनाया। इसके पश्चात् वे पूर्व तक फैल गए। जंगजू 'खश' कई देशों को तथा काबुल को तबाह करके पाश्चात्य दर्रों से हिमालय की गोद में कश्मीर से कुमाऊं तथा इससे आगे के इलाकों में आए और गुज़र बसर करने लगे, किन्तु जंगजू स्वभाव उम्रों तक उन से न छूटा। इसके पश्चात् कितने लोग, कबीले और आक्रमणकारी पश्चिमी रास्तों से हिन्दुस्तान आए और उत्तरी क्षेत्र को पददलित करते रहे, उसे दोहराना कठिन है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् पश्चिम और पूर्व के बीच सम्बन्धों में तेजी आई। बड़े पैमाने पर आना जाना आरम्भ हुआ तथा लोगों को एक दूसरे को समझने और सांस्कृतिक परम्परा को पहचानने का अवसर मिला। बात स्पष्ट करते हुए ए० के० नरेन लिखते हैं :—

"प्रस्ताव किया गया है कि हिन्द-यूनानी वे लोग थे जो हिन्दुस्तान (अब पाकिस्तान) के उत्तर पश्चिमी सीमांत प्रदेश के साथ-साथ सिकन्दर तथा उनके सलजोती वारिसों ने बसाए। यह अनुमान न केवल सीमित है अपितु एक ऐसा विश्लेषण है जो उपलब्ध तथ्यों के आधार पर सिद्ध नहीं होता। संस्कृत वैयाकरण- पाणिनी का समय यद्यपि अभी प्रामाणिक नहीं किन्तु इस बात पर आप सहमत हैं कि वह सिकन्दर से काफी पहले था और टैकसला के समीप सलोत्रा में रहता था। अष्टाध्यायी में वे लिखते हैं कि यवन शब्द का स्त्रीलिंग यवनी है (यदि यवन शब्द प्रयुक्त न होता तो वह इस शब्द का प्रयोग कैसे करता)

शास्त्रीय स्रोत प्रामाणित करते हैं कि उत्तर पश्चिमी सीमा के साथ यूनानी, सिकन्दर से पूर्व रह रहे थे।"

यवन शब्द कल्हण ने राजतरंगिनी में कई बार प्रयुक्त किया है। उसके पश्चात् जोनराज, श्रीवर आदि ने भी इस शब्द का प्रयोग किया है। कुछ लोगों का विचार है कि यवन शब्द यूनान शब्द का संस्कृत रूप है, जो सही नहीं। काफी समय तक 'यवन' हिन्दुस्तानी यूनानियों को कहते थे। यह नाम काफी पहले एक जाति को दिया गया था जो भारतीयों के कथनानुसार उत्तर पश्चिमी सीमा पर रहते थे, जिसका जिक्र मनु ने किया है। "लासन" की खोज के अनुसार इस जाति की गणना, कम्बोज, शाख, पालो तथा कीर्तों के साथ होती थी। किन्तु ए० व्यबर इस बात को कुछ और स्पष्ट करके कहता है :—

"इस नाम का ऐतिहासिक स्रोत उपलब्ध है। हमें अछमी "कील छाप" शिलालेखों से पता चलता है कि या० उ० ना के सिवा उनका कोई नाम न था क्योंकि एशिया-कोचक के अयोनियन (Ionian) पहले यूनानी थे जिनके साथ उनका सम्बन्ध स्थापित हुआ और उन्होंने सर्वसाधारण यूनानियों को इसी नाम से पुकारा। हो सकता है कि उस समय यह नाम "दारा" की फौज में उन भारतीयों द्वारा हिन्दुस्तान पहुंचा हो जो असफलता से बचने के लिए भाग कर घर पहुंचे।"

यह बात विचारणीय है कि अयोनियन यूनान की एक निर्माण शैली भी है। यूनानी वास्तु-कला के शेप दो रूप डोरिक तथा कारनेंथी हैं। डोरिक शैली सब से प्राचीन है और भारत में इसकी मिसालें कश्मीर में ही मिलती हैं। "अयोनियन" शैली पंजाब में विकसित हुई और "कारनेथी" शैली एशिया में पनपी। इस सम्बन्ध में सैफुलरहमान डार का कथन काफी दिलचस्प है।

"पाकिस्तान में तीनों शास्त्रीय शैलियों, अर्थात डोरिक, अयोनियन और कारनेथी का प्रयोग होता था। किन्तु इस समय उपलब्ध तथ्यों के अनुसार डोरिक शैली के सारे आसार आठवीं शताब्दी के हैं और यह अवशेष सही नहीं। उपलब्ध सभी अवशेष कश्मीर में हैं और टैकसला में इस ढंग का कोई निशान उपलब्ध नहीं। इतनी देर बाद इस शैली का ज़ाहिर होना हैरान करता है फिर भी इस शैली का सम्भावित स्रोत उत्तरी "स्याम" है।"

डार साहब को जो बात हैरान करती है वह एक रोचक ऐतिहासिक महत्व के पहलू की ओर संकेत करती है। डोरिक शैली, जैसा कि पहले कहा गया है शास्त्रीय वास्तुकला की सब से प्राचीन शैली है। टैकसला के अवशेषों में (जिनका सम्बन्ध सेथियन, पार्थियन शाक्यों के साथ है? डोरिक शैली के अवशेषों का न होना और कश्मीर में इस शैली के जीवित होने की सच्चाई इस बात का द्योतक है कि टैकसला से पहले जब पार्थी, सेथी आदि वहां नहीं पहुंचे थे, यूनानियों की कोई टुकड़ी डोरिक शैली लेकर वहां जा चुकी थी। यह शैली कश्मीर की आम शैली बन चुकी है। अपने स्रोत से अलग होने के पश्चात् इसमें मौलिकता न रही और कुछ यूनानी तथा कुछ कश्मीरी मिल कर कश्मीरी शैली के उस स्कूल का जन्म हुआ जिसे हम कश्मीरी वास्तुकला शैली कहते हैं। इस बात की पुष्टि ए० जी० आरबरी भी यह कह कर करते हैं कि कश्मीर में निर्माण कला की प्रवृत्ति पश्चिम की ओर थी किन्तु अलग-थलग होने के कारण वहां पुरानी शैलियां भी स्थिर रहीं। यह बात अब

स्वीकार कर ली गई है कि जिस स्थान पर ऐतिहासिक तथ्य जानने में लिखित परम्परा सहायक सिद्ध नहीं होती वहां पुरातत्व हमारी मदद करता है। अपने प्राचीन-कालीन अवशेषों पर बात करते समय हमें ताज़ा सूत्रों की रोशनी में शायद नये सिरे से सोचना पड़ेगा। वैज्ञानिक आधुनिक युग में ऐतिहासिक पूर्वकाल तथा अर्ध-ऐतिहासिक युग का इतिहास प्राचीन अवशेषों के आधार पर तैयार कर रहे हैं'' ! यूनानियों के साथ करीबी सम्बन्ध होने का ही परिणाम है कि कुछ यूनानी शब्द कश्मीरी भाषा के मूल शब्द बने हुए हैं। इनमें लड़की, मुर्गा, कोना, सियाही, कलम और प्याला जैसे शब्द सम्मिलित हैं। प्याला यद्यपि फारसी शब्द गिना जाता है किन्तु इसका स्रोत यूनानी और रूप Piala है।

सिकन्दर के आक्रमण से पूर्व और उसके बाद भी यूनानियों (जिन्हें आम तौर हिन्द यूनानी कहते हैं) के साथ कश्मीर का यातायात का सम्बन्ध रहा। यह बात उत्साहवर्धक है कि अपना काफी प्राचीन इतिहास उपलब्ध होने पर भी हमें विदेशी स्रोतों से ऐसी बातें ज्ञात होती हैं जिनका ज़िक्र स्थानीय इतिहासों में नहीं आया है, साथ ही बहुत से उन तथ्यों की पुष्टि होती है जिन्हें कल्हण तथा उसके बाद आने वाले इतिहासकारों ने दर्ज किया है। उदाहरण के लिए श्रीलंका के इतिहास "महावंश" में लिखा है कि जिस समय अनुराधापुरम बौद्ध विहार का उद्‌घाटन पहली शती ई० में हुआ उस समय यात्रियों का दूसरा बड़ा दल कश्मीर से आया था जो इस अवसर पर मौजूद था। कश्मीर के नाम और उसके शासन क्षेत्र के सम्बन्ध में हमें यूनानी स्रोतों से खासी जानकारी उपलब्ध होती है।

वितस्ता और चिनाब का ज़िक्र ऋग्वेद में भी हुआ है। महाभारत और पुराण भी बहुत सी बातें जानने में हमारे सहायक हैं। कश्मीर के ऐतिहासिक भूगोल का परिचय जातक कथाओं से भी प्राप्त होता है। गांधार जातक में कहा गया है कि गांधार कश्मीर का हिस्सा था और गांधार के समीप हिन्द-यूनानी रह रहे थे। गांधार जातक का समय ई० पू० छठी शताब्दी माना गया है। इस युग के कश्मीर के विस्तार के सम्बन्ध में जानकारी के लिए देखना पड़ेगा कि गांधार नाम से प्रसिद्ध क्षेत्र की सीमाएं क्या थीं। बौद्ध शास्त्रों के अनुसार गांधार 'शुरहू' महा जनपदों में से एक जनपद था। यह तीन सौ भौगोलिक मीलों तक फैला हुआ था। इसका सम्बन्ध मगध के क्षेत्र के साथ भी था। गांधार के खास दो नगर टैकसला तथा पुष्कलावती थे। पुष्कलावती का नगर पेशावर जिले में गन्धर्वों का प्रसिद्ध नगर था और यह शहर पाटलीपुत्र से पश्चिम की ओर यात्रा का आखिरी पड़ाव था। यूनानी इसे "प्योकोलिटस" और ह्यूनसांग पोसी० केलो० फती नाम से लिखता है। गांधार के लोग उस फौज में सम्मिलित थे जिस फौज ने ई० पूर्व छटी शताब्दी में यूनानियों पर आक्रमण किया। 'विहिश्तान' शिला-लेख के अनुसार गांधार एक समय अछमी-राज्य का एक प्रदेश था।"

गांधार और काबुल के सम्बन्ध में यह बात पुष्ट करना उचित है कि यह क्षेत्र कभी कश्मीर के तथा कभी ईरान के मातहत हुआ करते थे। इस बात का प्रमाणीकरण चीनी इतिहास से भी होता है। मेघवाहन तथा कारकोट नाग युग तक भी गांधार कश्मीर का हिस्सा था।

इन सन्दर्भों से जहां हमें एक ओर कश्मीर राज्य के विस्तार का पता लगता है वहां दूसरी ओर यह भी सिद्ध होता है कि पहाड़ों से घिरा कश्मीर प्राचीन काल में बाहर की दुनिया से अलग, जुदा और कटा हुआ नहीं था। कश्मीरियों ने प्रत्येक युग में दूर-दूर क्षेत्रों की खोज करके सांस्कृतिक और तहज़ीबी सफर को जारी रखा है, यहां तक कि वे सिंधु-घाटी की सभ्यता के युग में भी कश्मीरी देवदारु की लकड़ी और नाफा विभिन्न बन्दरगाहों से विदेशों को भेजते रहे हैं। कश्मीरियों की मुहिम जूई का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि कश्मीरी उत्तर पश्चिमी सीमा के लोगों के साथ चलकर खुतन और काशगर पहुंचे और वहां छोटी छोटी नई बस्तियां स्थापित कीं ' वे अपने आप को गर्व से हिन्दुस्तानी कहते थे।

हेरोडोट्स (420-484 ई० पू०) पहला यूनानी इतिहासकार है जिसने खोद कर सोना निकालने वाली चींटियों का ज़िक्र किया है। यही कथा उसके बाद आने वाले इतिहासकारों ने दोहराई है। यद्यपि इस कथा को परी-कथा का रूप दिया गया है फिर भी इससे कई बातें ज्ञात होती हैं। हीरोडोटस की गाथा एक काल्पनिक उपज नहीं अपितु इसकी तह में एक तथ्य एक सच्चाई छिपी हुई है : इसके साथ ही इस बात का पता चलता है कि कश्मीर प्राचीन यूनानियों की दृष्टि में था जो सीधे तौर पर या अनौपचारिक रूप से इस बात का प्रमाण है कि इन दोनों के बीच आपसी सम्बन्ध थे। यह बात अलग है कि सम्बन्धों का रूप क्या रहा होगा। कश्मीर के सम्बन्ध में यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि कश्मीर का राज्य प्राचीन काल में वितस्ता की घाटी तक ही सीमित न था। इसका राजनैतिक तथा ऐतिहासिक भूगोल समय-समय पर बदलता रहा है।

सोना खोदती चींटियों की घटना पर बात करते हुए हेरोडोट्स लिखता है :—

"इनके अतिरिक्त वहां दूसरे कबीले के हिन्दुस्तानी हैं, जो कश्यतरेरस और 'पकतिका' देश की सीमा पर रहते हैं। ये लोग अन्य हिन्दुस्तानियों से उत्तर की ओर रहते हैं, और लगभग उसी प्रकार रहते हैं जैसे बाखत्री। ये शेष लोगों की अपेक्षा झगड़ालू हैं इनमें से लोग सोना लाने के लिए भेजे जाते हैं। यह हिन्दुस्तान का वह रेगिस्तान क्षेत्र हैं जिसमें बड़ी-बड़ी चींटियां रहती हैं, जो कुत्ते से कुछ छोटी हैं किन्तु लोमड़ी से बड़ी है। फारस के राजा के पास ऐसी कई चींटियां हैं जो शिकारियों ने इस क्षेत्र से पकड़ कर लाई हैं। यह चींटियां भूमि के नीचे बिल बनाती हैं और यूनान की चींटियों की तरह सुरंग खोदकर मिट्टी के ढेर बनाती हैं। जो मिट्टी यह चींटियां उकेरती हैं वह सोना ही सोना होता है।"

हेरोडोट्स गलती से उन कानकुनों को चींटियां कहता है जो शीतकाल में फर लगाकर इस क्षेत्र से सोना निकालते रहे हैं। कानकुन मंगोल जाति के होने के कारण छोटे कद वाले और फर के वस्त्र लगाने से मनुष्यों की अपेक्षा पशु लगते होंगे। यह कथा उस समय ईरान में अति लोकप्रिय हुई। इन चींटियों का जिक्र अरबी लेखकों ने भी किया है और सोलहवीं शताब्दी में यह गाथा तुर्की में भी प्रसिद्ध थी। किन्तु इस कथा का दूसरा पक्ष भी है, वह यह कि महाभारत की समाप्ति पर दर्द राजा युधिष्ठिर को स्वर्ण पेश करता है जिसे पिपीलिका-स्वर्ण नाम दिया गया है। चुनांचे कुछ इतिहासकारों और शोधकर्ताओं ने लिखा है कि यद्यपि 'फर' वस्त्र लगाये कानकुनों का अनुमान अपने स्थान पर ठीक है किन्तु पिपीलिका स्वर्ण का भी कोई न कोई आधार होना चाहिए। हो सकता है कि

सिन्धु घाटी के किनारों में बिल बनाते हुए चींटियां मिट्टी खोद कर ऊपर लाती होंगी और इसके साथ सोना भी होता होगा, यही सोना फिर एकत्र किया जाता रहा होगा।"

हेरोडोट्स कश्मीरियों को कप्योय और कश्मीर को 'कश्यतरेरस' लिखता है। उसके पकतिया आज के पखतून हैं और इस प्रकार सिन्धु घाटी के ऊपरी भाग की निशानदेही उसने सही ढंग से की है। वह स्पष्ट कहता है कि सोना निकालने अथवा एकत्र करने वाले हिन्दुस्तानी नहीं अपितु किसी दूसरी जाति से सम्बद्ध हैं, जो आज भी अपनी जगह ठीक है। उसके 'दरिते' दर्द जाति के लोग है जो दर्दिस्तान में रहते हैं। 'पिलनी' स्पष्ट रूप से कश्मीरियों को कश्मीरी नाम देता है। डायनोसिस लिखता है-—

'कपशीरयो' एक कबीला है जो सभी हिन्दोस्तानियों में तेज चलने के लिए प्रसिद्ध है।' अटाकारी के पीछे जो जातियां हैं वह 'फिर्वरी' तथा 'टोचरी' हैं इनके बीच में कश्मीरी हैं जो हिन्दुस्तानी नसल से हैं।

'यूनानी स्रोतों से हमें यह भी पता चलता है कि अभिसार के राजा ने पुरुव (पोरस) की सहायता नहीं की। उसने यही उचित समझा कि वह सिकन्दर को अपनी वफादारी का विश्वास दिलाए। राजा को भाई के नेतृत्व में कश्मीर के सन्देशवाहकों की एक टुकड़ी तथा तोहफे भेंट किए गए जिनमें चालीस हाथी भी शामिल थे।' जब सिकन्दर इनकी वफादारी से विश्वस्त हुआ, तो उसने कश्मीर में अभिसार के राजा का राज्य क्षेत्र बढ़ाया और पड़ोसी उर्चक (हज़ारा) राजा को उसकी सरदारी स्वीकार करने की आज्ञा दी। यूनानियों को हज़ारा क्षेत्र असीचस नाम से विदित था।'

यह बात ध्यान देने योग्य है कि अकबर के समय में भी 'हज़ारा' कश्मीर का ही भाग था। इस बात का ज़िक्र अबुल फज़ल ने अकबरनामा में किया है। अभिसार का सन्दर्भ एक और सच्चाई की ओर संकेत करता हैं, विशेषकर इसलिए कि इस में कश्मीर और 'अभिसार' का ज़िक्र एक साथ आया है। चुनांचे राजतरंगिनी में लिखा है कि कश्मीर का राजा अभि-मन्यु छः मास के लिये द्रुव अभिसार' तथा अन्य स्थानों पर रहता था। इसका अभिप्राय यह है कि उस का शासन कश्मीर से बाहर दूर तक रहा है। महाभारत के अनुसार 'अभिसार' एक देश तथा एक जाति का नाम था। यह क्षेत्र बितस्ता तथा चन्द्रभागा के बीच का क्षेत्र था। इस क्षेत्र में अभिसार जाति के लोग रहते थे। यह क्षेत्र कश्मीर के पश्चिम और दक्षिण की ओर था। महाभारत की लड़ाई में इस क्षेत्र के लोगों ने दुर्योधन की सहायता की। राज-तरंगिनी भी इस तथ्य की पुष्टि करती है, जिससे स्पष्ट होता है कि यह क्षेत्र कश्मीर के अधीन था। एक ज़माने में इस क्षेत्र पर शिवसेन नाम का एक क्षत्रप शासन करता था। पंजाब से मिली एक तांबे की मुहर से ज्ञात हुआ है कि शिवसेन अपने को अभिसारप्रदेश का क्षत्रप मानता था।

क्रेट्स लिखता है कि टैक्सला तथा आम्भी के शासक अभिसारों तथा पोरावासों के साथ लड़ते थे। एरियन (Arrian) का कहना है कि यह संगठन न केवल टैक्सला के विरुद्ध लड़ते थे अपितु शूद्रकों और मालवों के विरुद्ध भी। सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् सब कुछ बिखर गया जिसका प्रभाव कश्मीर अतः इसके आस-पास के क्षेत्रों पर पड़ना अनिवार्य था।

चुनांचे मिनांदर के समय कश्मीर उसके राज्य का एक हिस्सा गिना जाता था । इस तथ्य का स्पष्ट हवाला डब्ल्यू०-डब्ल्यू० टारन देता है । यूनानियों की बाख्तरी सलतनत स्थापित होने के पश्चात् 'अमू' नदी से गंगा की घाटी तक बड़े पैमाने पर व्यापार शुरू हुआ । व्यापारी बाख्तर तथा कश्मीर की चीज़ें लेकर व्यापार के लिए निकलते थे । सम्भवत: इसी ज़माने में रोम का 'दीनारेस' शब्द दीनार बन कर कश्मीर पहुंचा । कश्मीरियों ने इसका नमक चखा और अब यह शब्द 'द्यार' बन कर कश्मीरी में प्रयुक्त होता है ।

कश्मीर के सम्बन्ध में यद्यपि कई इतिहासकारों ने लिखा और सन्दर्भ दिये किन्तु 'टालमे' कुछ ऐसी बातों का पता देता है जिन का एक अलग ऐतिहासिक महत्त्व है । 'कलाडेस टालमेस' यूनानी, भूगोलवेत्ता और एक गणितज्ञ था । वह मिस्र के स्कन्दरिया नगर में दूसरी शती में उभरा । कहा जाता है कि वह यूनानी नगर टालमेसा में उत्पन्न हुआ था । उसने ज्योतिष तथा भूगोल के सम्बन्ध में अपने अनुभव 139 ई. में प्रकाशित किए । पूर्वी देशों में उस का भूगोल इस क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण कार्य गिना जाता है । कश्मीर पर चर्चा करते हुए वह अपने भूगोल ग्रंथ में लिखता है :--

'आगे पूर्व की ओर का क्षेत्र कश्पीर्यों (जो मेरी राय में कश्पीराय होना चाहिये) है । इसके नगर ये हैं :—

(अ) सलाजसा

1. इस्ट्रासस 2. लोब्कला 3 भट्ट नगर 4. आरी पारा 5. अभाकितस 6. ओस्टाबल स्टारा ।

(ब) कश्पीरिया

1. पासिकना 2. डाय डाला 3. अरदोन 4. अंदबारा 5. लिगानीरिया 6. खोनामार्गा आदि ।

कश्मीर के अधीन क्षेत्रों की गणना करके यद्यपि 'टालमे' इसके विस्तार का नक्शा पेश करता है किन्तु उसने जो नाम गिनाए हैं उनकी गहराई में जाना काफी कठिन है । नामों पर बात करते हुए सनेट मार्टन लिखता है कि कश्पीरा साफ तौर पर कश्मीर की राजधानी है ।

टालमे ने दर्दों का ज़िक्र 'दर्द-राय' नाम से किया है, महाभारत में इनका ज़िक्र दर्द नाम से ही हुआ है । दर्द संस्कृत शब्द है और इसका अर्थ पर्वतीय है । यह क्षेत्र स्वर्ण खोजती चींटियों के लिए प्रसिद्ध रहा है । इस बात को हेरोडोट्स ने उभारा और तत्पश्चात मेगस्थनीज़ तथा स्ट्राबो ने पुष्टि की । स्ट्राबो ने दर्दों को 'दरदाय' और पिलियन ने दरर्दै कहा है और इन लोगों ही को 'दरदोनाय' भी कहा गया है । सिन्धु नदी के स्रोत के आस-पास स्वर्ण निकलने के कारण सिन्धु स्वर्ग की चार नदियों में से एक मानी गई है ।

इसका ज़िक्र Genesis में भी आया है ।

कश्पीरिया कश्मीर की घाटी है और 'बरनोफ' के अनुसार कश्यप मीर शब्द का परिवर्तित रूप । इसका मूल रूप कश्यप मीर या मर है, जिसमें से 'सकायतस' का 'कश्यप पीर पोस' और हेरोडोट्स का कश्पेत्रस बना है । 'कश्पेत्र्योस' वही नगर है जिस का ज़िक्र सीकायतस ने 'कश्यप पीरस' नाम से किया है । वह उसे गांधारों का नगर मानता है ।

'टालमे' के अनुसार उस समय कश्मीर एक विशाल राज्य था। इस की सीमाएं दक्षिण की ओर विन्ध्याचल तक तथा इसका पश्चिमी हिस्सा गांधार था। हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र का काफी हिस्सा इसके अधीन था। हिमालय के उस भाग से पंजाब के बड़े दरिया निकलते हैं। पंजाब, गंगा तथा यमुना का ऊपरी भाग भी कश्मीर के मातहत था। टालमें कश्मीर के राज्य क्षेत्र में चिनाब क्षेत्र (सिंद बल) रहोविस (रावी) तथा वितस्ता का स्रोत मानता है। इस बात से उसके भौगोलिक ज्ञान का परिचय मिलता है। 'टालमे' का कथन किस हद तक सही है इसकी पुष्टि भविष्य ही कर सकता है, जब भूमि में छिपी सम्पत्ति को खोजने का अवसर मिलेगा। किन्तु टाल्मे के पश्चात भी कल्हण लिखता है कि मेघवाहन जैसे वीर राजा ने दक्षिण तक का क्षेत्र जीता, ललितादित्य सात कोंकनों तक पहुंचा और मेहरकुल ने लंका तक अपना अधिकार जमाया। ललितादित्य की विजय का प्रमाण हमें उस समय मिला जब मध्य प्रदेश में उसके सिक्के उपलब्ध हुए। हर्मन गोइज़ जैसा विद्वान मानता है कि उसका (ललितादित्य का) शासन मैसूर तक था। कश्मीरियों में रहने के स्थल टालमें को भूले नहीं हैं। वह लिखता है कि 'दर्द सिन्धु नदी के स्रोत के पास और कश्पीरियायी वितस्ता के स्रोत के आस-पास रहते हैं।

टालमे ने 'लव्का कूट' नाम लेकर एक किले का जिक्र किया है। यह वही स्थान हैं जिसे विलसन ने लाहौर के साथ जोड़ दिया है। यह किला मेक क्रडलस के हाथ नहीं आया। एक ज़माने में पंजाब में इस कोट की काफी चर्चा थी। महमूद गज़नवी जैसा व्यक्ति इस किले को जीत न सका था। यह किला अर्ल स्टाइन ने 'लोहर कोट' नाम से खोज निकाला हैं। यह स्थान लोरेन, लोहर तथा लुह नाम से भी प्रसिद्ध है। कश्मीर की सीमा पर लोहर कोट एक सुरक्षा चौकी के रूप में उसी प्रकार प्रसिद्ध है जैसे मध्यकालीन इतिहास में राजस्थान का चित्तौड़गढ़ किला प्रसिद्ध रहा है। टालमे के हवाले से पहली बार इस बात की पुष्टि होती है कि 'लोहर-कोट' काफी पुराना किला है। 'मेकक्रिंडल' टालमे के भूगोल पर चर्चा करते हुए लिखता है कि टालमे के भूगोल में लिखित अयोमोसा सम्भवतः जम्मू है जो ऐतिहासिक तौर पर काफी प्राचीन जगह है, जहां के सरदार एक समय उत्तर के पांच राजाओं में गिने जाते थे। यह सचमुच उसी बड़े मार्ग पर था जो एक ज़माने में सिन्धु से पाली यात्रा (पाटलीपुत्र) जाता था। जम्मू पूर्व काल में मद्र देश में सम्मिलित था। 'मद्र-देश' की राजधानी सागला थी। टालमे ने इस स्थान का नाम सागला ही लिखा है जबकि 'एरेन' इस का नाम सांगला लिखता है, इसे शाकल भी कहा गया है। महाभारत में इसका ज़िक्र कई वार आया है। यह वही नगर है जिसे सियालकोट कहते हैं। प्रोफेसर मूनिस रज़ा एक स्थान पर लिखते हैं कि 'कश्मीर की वादी वितस्ता 'दस्त बोसा' है। कश्मीर के सम्बन्ध में प्रायः सभी इतिहासकारों ने वितस्ता नदी का ज़िक्र किया है। टालमे ने वितस्ता का नाम 'बडासपस' लिखा है, जो इसके नाम के बहुत समीप है। मेकक्रिंडल लिखता है कि बुदस्ता शब्द का अर्थ 'कश्वाहरिथ' है। होरेस ने इसी वितस्ता का नाम 'रायडस्पस' लिखा है। वर्जिल ने इसका जिक्र 'मेकस हायडस्पस' कह कर किया है। एक समय यह वितस्तापुर या पूर्वास की पश्चिमी सीमा की निशानदेही करती थी। मेगस्थनीज़ भी वितस्ता को हायडस्पस नाम से लिखता है।

चिनाब कश्मीर की एक और बड़ी नदी है जिस का ज़िक्र वितस्ता के साथ ही ऋग्वेद में किया गया है। चिनाब का एक नाम चन्द्रभागा भी है और इसका ज़िक्र यूनानियों ने

सन्दर-फागोस नाम से किया है । किन्तु उच्चारण की दृष्टि से यह शब्द 'अन्दर-फागोस' या 'एलेग्ज़ेंडर-फागोस' (अर्थात सिकन्दर को खाने वाली) भी बनता है ।

टालमे चिनाव को सिन्ध-भागा नाम से लिखता है । टालमे का सिन्ध-भागा नाम प्राकृत चन्द्रभागा का यूनानी रूप है । इसी नाम का दूसरा रूप कन्ताबरा है जो पिलनी का दिया हुआ है ।

यूनानी राजा मिनांदर और दूसरे हिन्द-यूनानी बादशाहों का कश्मीर के साथ सम्बन्ध का पता उन सिक्कों से भी चलता है जो कश्मीर में मिले हैं । सिमथन में हुई खुदाई से इसकी पुष्टि होती है । सिमथन में जो खुदाई हुई उसमें उत्तरी भारत के मौर्य युग की काली हमवार ठीकरियों के ऊपर ठीकरियों की एक मोटी तह मिली है जिसके कई हिस्से हैं । यह ठीकरियां पतली हैं और इन का रंग गहरा सुर्ख है । सिमथन में मिले अवशेषों में मिट्टी की एक विचित्र मुहर मिली है जिस पर एक हिन्द-यूनानी देवता का चित्र बना हुआ है । छत्रय-युग के कुछ सिक्के भी यहां मिले हैं । हिन्द-यूनानी युग का द्योतन करने वाली ठीकरियों की तह के ऊपर कुशान युग की ठीकरियां मिली हैं ।

सिमथन में मौर्य युग के अवशेष मिलने से इस बात की पुष्टि होती है कि प्राचीनकाल में कश्मीर मौर्य राज्य का हिस्सा था जिस का हवाला पहले ह्यूनसांग और बाद में कल्हण देता है । बौद्ध-ग्रन्थ 'दिवे वादन' में इस बात का उल्लेख है कि अशोक ने प्रमुख कश्मीरी भिक्षु, तीसरी बौद्ध कांफ्रेंस में सम्मिलित होने के लिए पाटलीपुत्र बुलाए थे ।

अशोक के शिलालेख इस बात को प्रमाणित करते हैं कि उसका राज्य अफगानिस्तान तक फैला था । शाहबाज़ गढ़ी का शिलालेख इस बात का संकेत करता है कि दर्दिस्तान उसके राज्य में सम्मिलित था। इस शिलालेख में ऐसे शब्द मौजूद हैं जो दर्द भाषा से सम्बद्ध हैं । अशोक लोगों के लिए शिलालेख लगवाता था । दर्द भाषा से मेल खाने वाली इबारत में शिलालेख लगवाना दिखाता है कि दर्दिस्तान उसके राज्य में सम्मिलित था । दर्द क्षेत्र यदि अशोक के राज्य में था तो कश्मीर उस से अलग कैसे हो सकता था ।

कश्मीर के इतिहास के बारे में बात करते समय वे सारे स्रोत खोजने और परखने की आवश्यकता है जिन में सीधे अथवा परोक्ष रूप से कश्मीर का ज़िक्र मौजूद है । शोध कार्य एक क्रमिक कार्य है । इसमें कोई भी बात अन्तिम सत्य नहीं हो सकती । किन्तु नई बातें सामने आने से पुरानी बातों पर नए सिरे से विचार करने की आवश्यकता है, क्योंकि सच्चा शोधकर्ता सर्वदा अपने कान खुले रखता है और आंखों पर कभी पट्टी नहीं बांधता ।

सन्दर्भ :—

1. A. K. Narin : Indo Greeks
2. Bijnath puri : India in Classical Greek writings.
3. A G Arbary : The Heritage of Iran.
4. J. W. Macrindles : Notes on Arrian's India.

5. Sir Thoms Holdich : The Gates of India.
6. R. N. Soletore : Encyclopaedia of Indian Culture,
7. Sardari Lal Shali : Recent Advances in Historical Archaeolog of Kashmeir.
8. E J. Rapson : Oxford History of India.
9. W. W. Jaran : Bactrian Greeks and India.
10. Moti Chander : Trade and Trade Routes in Ancient India.
11. Fredric Schiern : The Tradition of Gold digging Ants.
12 J. W. Macrindle : Ptolemy's Geography of India and South rn Asia.
13. Saifur Rehman Dar : Taxila and Hellinism.
14, Govind Chander : Indo Greek Jewellery.

ooo

जम्मू-कश्मीर के लेखकों से विशेष अनुरोध

राज्य की कला, संस्कृति एवं साहित्य के सृजन एवं
विकास का साक्ष्य प्रस्तुत करती रचनाएं
आमंत्रित हैं, अविलम्ब भिजवाएं ।

—सम्पादक

'केसर' एक महाकाव्य

□ डॉ० प्रेम सिंह जीना

रामायण तथा महाभारत जैसे महाकाव्यों के समान केसर तिब्बत का एक राजा था। पूरे मध्य एशिया में इसकी पौराणिक कथाएं वीर गाथा के रूप में सुनाई जाती हैं। आज जहां महायान बौद्ध संस्कृति का एक अंश भी सुरक्षित हैं वहां केसर की कथाओं को गद्य तथा पद्य में सुन सकते हैं। ये कथाएं विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित की गई हैं परन्तु अभी भी इन कथाओं का पूर्ण और सही संकलन नहीं होने के कारण ये हस्तलिखित अथवा मौखिक रूप में ही विद्यमान हैं।

कथाएं सुनाने की परम्परा सम्पूर्ण मध्य एशिया में प्रचलित है। आमडो-खम्म से मध्य तिब्बत, मंगोलिया, चीन, सिक्किम, भूटान, बल्तिस्तान और लद्दाख सभी क्षेत्रों में केसर कथाओं को मौखिक सुनाने की परम्परा है। लद्दाख में पौराणिक कथाओं को केवल शीत ऋतु में ही सुनाया जाता है। लद्दाख में लोगों का विश्वास है कि यदि कोई केसर कथाओं को शीत काल के अतिरिक्त अन्य ऋतुओं में सुनायेगा या पढ़ेगा तो उसे पाप लगेगा। चूंकि लद्दाख में शीत ऋतु काफी लम्बी अवधि की होती है इस अवधि में पेड़-पौधे सभी सुषुप्ता अवस्था में होते है। कीट-पतंगे अपने-अपने घोंसलों में चले जाते हैं। अतः जब केसर कथाएं सुनाई जाती हैं तो उस समय मनुष्य ही नहीं सभी प्राणी उसे ध्यान से सुनते है और कथा का आनन्द लेते हैं।

मंगोलिया में सर्वप्रथम केसर कथाओं को सुनाने की परम्परा थी। प्रोफेसर श्यालवेन लेवि ने केसर कथाओं को मध्य एशिया का 'लीजेंड' तथा सुनीति कुमार चटर्जी ने 'ओडिसी' तथा डा० ए० एच० फ्राके ने 'सोलर मायेथ' कहा है।

केसर की पौराणिक कथाओं की जानकारी यूरोप में सर्वप्रथम सन् 1770 से जर्मन के निवासी पीटर साइमन पलास ने दी। यही यूरोप का सबसे पहला निवासी था जिसने मंगोल निवासियों के बीच चर्चित 'केसर संग' की कथाओं का जर्मन भाषा में अनुवाद किया। सन् 1741 में बर्लिन में जन्मा जब यह युवक वृक्षहीन भूमि में कलमूकों के साथ

अपने कार्य हेतु रूस की यात्रा के लिये जा रहा था तब इसने कलमूकों के द्वारा केसर कथाओं को सुना। इसके पश्चात् बी० बर्गगन तथा आई० जे० सच्छमिद .दो यात्रियों ने केसर की पौराणिक कथाओं के कुछ अंशों को मंगोलिया भाषा से जर्मन भाषा में अनुवाद करके प्रकाशित किया। बी० वर्गमन का अनुवाद छन्दों से युक्त है। इसका अनुवाद कार्य 'नोमाडिस्चे स्ट्रीफेरिएन उन्तर देन कालमुकन' में उपलब्ध है। आई० जे० सच्छमिद का अनुवाद राजा खङ्ग-सी के अधिकार में (1716 ई० में) मंगोलिया भाषा में सम्पादित ग्रन्थ है। आ० जे० सच्छमित का अनुवाद 'दे तातेन बगदा गेसर चन्स' के नाम से प्रकाशित है। इस प्रकार केसर में कार्य यूरोप में सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में हो चुका था परन्तु मंगोलिया में केसर का अनुवाद कार्य 1836-39 में प्रकाश में आया। तब से लेकर आज तक मंगोलिया भाषा से अनुवाद कार्यों का सिलसिला चलता आ रहा है।

लद्दाखी भाषा के रूप में केसर की कथाओं की जानकारी फ्रांके के द्वारा 1901-1902 में यूरोप में गयी। हिन्दी भाषी भारतीय क्षेत्रों के लिए डॉ० प्रेम सिंह जीना का पहला प्रयास 1984 में केसर से संबंधित तथ्यों को उजागर करता है।

मंगोलिया भाषा में 'केसर रवान' के रूप में केसर साहित्य का संस्करण 1716 में हुआ। इस संस्करण का कुछ अन्य भाषाओं में अनुवाद किया गया। मंगोलियन विद्वानों के अनुसार इस प्रकाशन को मंगोलियन परम्परा का साहित्य कहा जा सकता है। इसमें केसर की परम्परागत मौखिक सुनाई जाने वाली गाथाओं को लिया गया है। कथाकार कोकोनोर में रहा करते थे। चाङ्ग-स्क्या वह पहला व्यक्ति था जिसने कोकोनोर में रहकर केसर कथाओं को मौखिक सुनाने की परम्परा जीवित रखी।

केसर की धार्मिक कृतियां 1600 ई० की है। मंगोलिया में 1614 ई० में पहली धार्मिक कृति प्रकाशन में आई। उक्त तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि केसर पंथ का काव्य 16वीं शती के उत्तरार्ध में उपलब्ध हो चुका था।

तिब्बत में 'सुम-पा-खन-पो', तीसरे पंनछेनलामा की कृतियां, दूसरे चाङ्ग-स्क्या की कृतियां तथा डर-ग्यास-नो-मेन-हन की कृतियां इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करती है कि केसर काव्य 18वीं शती तक तिब्बत तथा अमरो में व्यापक रूप से फैला हुआ था।

मि-ग्यूर-दोर्जे ग्रंथ से ज्ञात होता है कि केसर कथाओं का न सिर्फ का-ग्युद-पा तथा सा-क्या-पा बौद्ध सम्प्रदायों ने आदर किया बल्कि बोन-पा ने भी इन्हें सम्मानपूर्वक अपने अधिकार में रखा।

केसर का उल्लेख तेर-मा नामक ग्रंथों में बहुतायत में मिलता है। तेर-मा में एक स्थान पर कहा गया है कि एक बार पद्मसम्भव काल में तत्कालीन राजा की आम सभा में का-थङ्ग-दे-लङ्ग राज दरबार में उपस्थित हुए। सभा में खलबली मच गई। तब का-थङ्ग-दे लङ्ग ने सभा को अपने सिद्धि बल से शांत कर उन्हें संसार के उद्भव पर प्रकाश डालते हुए सम्बोधित किया।

केसर तिब्बत के चार महान प्रतिनिधि राज्यों में से एक था। यह गे-सर राज्य से सम्बन्धित था। इसको सर्वप्रथम ग्रीक में तथा फिर दुर्किश में जाना गया। ईरान में 'रूम' पूर्वी रोम में 'बाइजनस' और दुर्किश में 'अनातोलिआ' के नाम से जाना जाता है।

लिङ्ग-थङ्ग से सम्पादित केसर कथाओं का विवरण हमें बहु-चित्रणमय महान जि-मा-पा तथा खम के आंदोलन रिस-मदे से भी मिलता है। केसर से सम्बन्धित रचनाओं का संक्षिप्त उल्लेख निम्न है—

1. जम-यङ्गस-यिन-चे-वङ्ग-पो (1820-1892 ई०)
2. जु-मि-हम (1846-1912 ई०)
3. छोग-युर-लिङ्ग-पा (1829-1870 ई०)
4. लास-रब-लिङ्गपा (1856 ई०)

चीन के डान-खोग बौद्ध भिक्षु द्वारा रचित ग्रन्थों से हमें केसर के विभिन्न करतबों का विवरण मिलता है जो उसने नर्क लोक में किये। चीन में केसर से सम्बन्धित अन्य ग्रंथों में 'छोस-थी-वङ्ग-युग' तथा 'होर-लिंग' प्रमुख हैं। तिब्बती भाषा में 'शे-तन-हब्स-रुङ्ग' ग्रन्थ उल्लेखनीय है।

डे-गे-हब्स-रुङ्ग ने केसर पर 20 पद्यों का रचना की। इन पद्यों की रचना 'नाग-छेन' के 'ल्हा-वङ्ग-शे-रिंग' और 'डे-गे' के 'शे-रिङ्ग-डोन-खब' से मौखिक केसर कथाएं सुनने के पश्चात् की गईं। इससे स्पष्ट होता है कि केसर कथाओं को प्रथम बार 18वीं शती में पद्यों के रूप में प्रकाश में लाया गया।

19वीं शती में सि-नियङ्ग और क्युई-तु नामक स्थानों से तिब्बती भाषा में हस्तलिखित केसर गाथाएं मिलती हैं। इनमें से कुछ का अनुवाद एम० हरमेन ने किया। परन्तु मंगोलिया भाषा में इनका अनुवाद 1959 ई० में उलनबटोर से प्रकाशित हुआ।

लद्दाखी विद्वानों के अनुसार केसर का जन्म आठवीं के 50 स्रोत के बीच हुआ। जन्म लेने के पश्चात् केसर ने आश्चर्यजनक करतब दिखलाए। रूप वदल कर दूर देशों में जाकर दु:खी जनता के दु:खों को दूर किया। केसर बहुत बलवान और शक्तिशाली था। एक बार वह अपने दुश्मनों से लड़ते-लड़ते लद्दाख से बलितस्तान तक पहुंच गया और अन्त में जब उस के दुश्मन उससे बलितस्तान में हार गये तब उसने उनका पीछा छोड़ा। लद्दाख प्राचीनकाल में तीन हिस्सों में बटा हुआ था—जुङ, स्तोत तथा पर। केसर ने लद्दाख के इन सभी इलाकों में अपने करतब दिखलाए। आज इन इलाकों में केसर की कथाएं प्रचलित हैं। केसर लद्दाख के चङ-थङ, जाङस्कार तथा नुब्रा क्षेत्रों में भी पहुंचा। इन सभी क्षेत्रों में केसर के निशान आज भी दृष्टिगोचर होते हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1. धनुष-बाण का चिन्ह।
2. घोड़े को बांधने का वृक्ष।
3. पत्नी का मुकुट।
4. पत्नी का आभूषण।
5. पत्नी के कपड़े सुखाने का स्थान।
6. दामन (बाजा)।
7. बर्तनों के निशान।

8. खरक्स श्वेत वस्त्र जिसे सम्मान के लिए फूलों के समान पेश किया जाता है।
9. त्रिशूल।

लद्दाख में यद्यपि केसर पौराणिक कथाओं को मौखिक रूप में याद रखने तथा उसे सर्दियों में सुनाने की परम्परा 10वीं शती पूर्व में भी विद्यमान थी, परन्तु जब लद्दाख में महायानी संस्कृति का प्रचार-प्रसार हुआ तब केसर कथाओं की महत्ता प्रकाश में आई। 12वीं शती के प्रारम्भ में इसे लिपिबद्ध किया जाने लगा। केसर साहित्य गद्य तथा पद्य में लिखा जाने लगा। पद्यों में वीर रस का प्रयोग आम मिलता है। केसर के पात्रों द्वारा आम लद्दाखी जनता को उचित एवं अनुचित कर्मों से अवगत कराने की चेष्टा की जाती थी।

डा० ए० एच० फ्रांके ने केसर के 18 वीरों के साथ लिंग द्वीप में जन्म लेने का वृत्तांत कहा। यह उनका लद्दाखी भाषा में संकलन था। फ्रांके ने केसर की जिन रचनाओं का लद्दाखी भाषा में अंग्रेजी सारांश प्रस्तुत किया उनका विवरण निम्न है—

1. Prologue to the Kesar Sagar Vocabulary and Comments.
2. The Story of Kesar's Birth.
3. The Story of a Braguma's Marriage to Kesar.
4. Kesar's Journey to Cnina and Marriage with g yue —dkon—m Chognu.
5. Kesar's Victory over the Giant of the North.
6. Capture of a Brugama by the King of Hor.
7, Defeat of the King of Hor.

सारांश में कहा जा सकता है कि केसर साहित्य गम्भीर है। यह महायानी संस्कृति की अमूल निधि है। तथागत बुद्ध के समान 12 लीलाओं को दिखलाकर इसने बोधिसत्व की तरह कार्य करके दु:खी समाज में रहने वालों का दु:ख दूर किया। पद्य तथा गद्यमय केसर साहित्य कई लोकगीतों से जुड़ा हुआ है। लद्दाख में इन्हें—डू-लू, गीङ लू, स्मत-लू, स्तोत-लू तथा छिग-लू के नाम से जाना जाता है। यदि केसर को महाकाव्य कहा जाए तो अत्युक्ति न होगी।

सन्दर्भ :—

1. Chatterji, Suniti Kumar (1981) : Introduction the Sagar of King Kesar—"The Epic of Gesar", Vol. 29, P. XVI.

2. Stain R. A. : "English Introduction of" The Epic (1979) of Gesar", Vol, 2, P—1.

००९

व्यंग्य

गंजे को नाखून

□ पूरन सूरमा

एक बार मैंने भगवान से कहा—'प्रभो आपने गंजे को नाखून क्यों दिये ?'

भगवान बोले—'मैंने तो बेटे नाखून सबको ही दिये हैं। गंजे के साथ मैं पक्षपात क्योंकर करूं। वह भी आदमी ही है। लेकिन तुम यह पूछ क्यों रहे हो ?'

मैंने कहा—'प्रभो, गंजे ने अपना पूरा माथा खोद लिया है। घावों से लहूलुहान होकर गंजा विकृत हो गया है।'

'तो तुम क्यों फिकर करते हो। गंजा जाने और उसका काम जाने।' भगवान बोले।

'नहीं प्रभो, वह गंजा मेरा दोस्त है। वह साहित्यकार है और मेरा समानधर्मी है। भगवान न करे उसे कुछ हो जावे। परन्तु आपकी कृपा से वह लालबुझक्कड़ अफसर बन गया है।' मैंने कहा।

भगवान यह कहकर अन्तर्ध्यान हो गये—'देखो वत्स, किसी से ईर्ष्या मत करो। साहित्यकार अफसर बन गया तो तुम्हें क्या ? रहा सवाल गंजे का, उसकी टांट और उसके नाखून यदि वह खुजा-खुजा कर मरना चाहता है तो उसे कुत्ते की मौत करने दो। परन्तु तुम टिप्पणी मत करो।'

मुझे भगवान की बात सत्य भी लगी और विचित्र भी। सोच-सोच कर हंसी भी आयी कि अच्छा भला आदमी था साहित्यकार, अफसर क्या बना कि हुलिया ही बिगाड़ लिया।

एक बार मेरा उस साहित्यकार मित्र से काम पड़ गया। मैंने उसके पास जाकर कहा—'देखिये साहित्यकार जी, आप अफसर हैं और आपके दफ्तर में मेरा एक मामला अटक गया है—उसे निकलवाइये।'

साहित्यकार बोला—'देखो भाई, यह दफ्तर है, इसका काम करने का एक कायदा है। यदि नियमानुसार फाइल निकलने की होगी तो निकाल दी जायेगी। वरना मैं विवश हूं।'

मैंने कहा—'कैसी वहकी-वहकी बातें कर रहे हो मित्र। तुम कल तक मेरे घर घण्टों पड़े रहकर मुझसे साहित्य की ट्रेनिंग लिया करते थे। मित्रता का दम भरते थे आज यह नयी आचार-संहिता बना लाये!'

साहित्यकार ने गंभीरता को चेहरे पर और सघन किया और बोला—'देखो वह बातें अब छोड़ो। गनीमत समझो मैंने तुम्हें दफ्तर में पहचान तो लिया वरना अस्सी प्रतिशत साहित्यकारों को मैंने पहचानने से ही इंकार कर दिया है।'

'खैर पहचानकर तो आपने मेरे ऊपर मेहरबानी की है। परन्तु मेरा वह काम ऐसा नहीं है। जो नियमों में न आता हो। वह तो सिर्फ तुम्हारा बाबू उसे खामख्वाह दबा रहा है। दरअसल वह कुछ चाहता है रुपया-पैसा। और तुम तो शुरू से ही भ्रष्टाचार विरोधी रहे हो। भ्रष्टाचार को लेकर तुमने बड़े-बड़े लेख लिखे है तथा स्वच्छ प्रशासन की कामना सदैव तुम्हारे मन में रही है। इस दृष्टि से मैंने तुमसे कहा हैं कि तुम दिये तले जो अंधकार है उसे दूर करो वरना तुम्हारे अफसर बनने का फायदा क्या है।' मैंने कहा।

अफसर साहित्यकार ने बातों को निचोड़कर कहा। ठीक है मैं देखूंगा, तुम अगले सप्ताह में मिलो।'

अगले सप्ताह गया तो अफसर साहित्यकार किसी अखबार में अपनी रचना प्रकाशनार्थ देने चला गया था। मैंने उसके लौटने तक बाबू से ही बात करना उचित समझा। बाबू ने मुझे प्रैक्टिकल बनने की सलाह देकर कहा कि उसके अफसर जो कि मेरे मित्र भी हैं—वे इस मामले को निकालने की कीमत मांग रहे हैं इसलिए भला चाहते हो तो देकर पिण्ड छुड़ाओ। मेरा हृदय चीत्कार कर उठा। मैंने कहा—'ऐसा हो नहीं सकता।'

बाबू ने कहा—'सर, आजकल जो नहीं होना चाहिए वही हो रहा है।'

मैंने कहा—'लेकिन तुम्हारा अफसर मेरा मित्र है—उसकी यह हिम्मत हो नहीं सकतीं।'

'मित्र तो आप मानते हैं उन्हें। वे आपको एक क्लाइण्ट मानते हैं और सच तो यह है कि अब वे फटीचर साहित्यकारों के साथ उठना-बैठना भी नहीं चाहते। उनकी नजर में तमाम साहित्यकार गिरे हुये तथा घटिया इंसान हैं। बाबू ने साहित्यकार के भीतर का सच खोला।

मैंने कहा—'हमारे बीच से ही जाकर वह अपने आपको क्या समझने लगा है?'

'वे लेखन अब शौकिया करते है सा'ब। अखबार वालों को वे विज्ञापन देते हैं उनके काम कराते हैं, इसलिए उन्हें आप पा नहीं सकते। वे अब बराबरी के अफसर लोगों के साथ उठते-बैठते हैं। हालांकि उन्हें 'हूंकनी' आती है परन्तु वे मन मारकर चुप रहते हैं। कभी किसी साहित्यिक गोष्ठी-समारोह में जाते भी हैं तो बड़ा ही अटपटा सा लगता है उन्हें। किसी से बात नहीं करना चाहते, कटे-कटे से रहते हैं, गंभीरता चिपकाये अफसर और साहित्यकार का निर्वाह करते हैं। इसलिए इनका मायाजाल आप समझेंगे नहीं। प्रकाशकों को इसलिए उनकी किताबें छापनी पड़ रही हैं। क्योंकि वे हजारों रुपयों की सरकारी खरीद करवाते हैं। इस बूते पर उनकी घटिया पुस्तकें भी प्रकाशन पा रही है। आप लोग जो उच्च साहित्य लिख रहे हैं—वह प्रकाशक मुफ्त में भी नहीं छापना चाहता।'

मैंने कहा—'भाई धन्य हो तुम । यह लो पांच सौ रुपये और निकालो मेरी फाईल ।'

फाइल निकल गयी, मेरा काम हो गया । एक दिन एक लेखक सम्मेलन में साहित्यकार मिल गया । मैंने उसका अफसरी रूप आंककर बात करना उसकी औकात के खिलाफ समझा । वही खुद आया और बोला—'मैंने तुम्हारा वह काम करा दिया था ।'

मैं बोला—'हां, वह मेरा वह कार्य हो गया था । बाबू ने तुम्हारे लिए मुझसे सिर्फ पांच सौ रुपये मांगे थे ।'

साहित्यकार की जमीन खिसक गयी, चेहरा सफेद पड़ गया और हाथों के तोते उड़ गये । वह अपने आपको संभल कर बोला—'यह क्या कह रहे हो तुम । झूठा इल्जाम लगाते हो मुझ पर ।'

मैंने कहा—अफसर साहित्यकार मैं क्यों लगाने लगा इल्जाम । मुझसे तुम्हारे बाबू ने तुम्हारे नाम से पांच सौ रुपये लिये हैं और तुम्हारा सारा घिनौना रूप बखाना है । चाहो तो पूछ लेना अपने बाबू से ।'

हिकारत की नज़र से देखता हुआ वह भीड़ में खो गया । उसके बाद उससे मेरी बोल-चाल बंद हो गयी । एक अच्छे साहित्यकार की मृत्यु अफसर बनने पर ऐसे होती है, मुझे पता नहीं था । साहित्यकार के ये संबंध लगभग समानधर्मियों के साथ ऐसे बन गये थे । किसी को घास नहीं डालता था । घटिया कीचड़ में से निकाला यह कीड़ा सफेद पोश बना अपना स्थान बनाने के प्रयासों में लगा रहता ।

एक दिन अफसर साहित्यकार सेवानिवृत्त हो गया । साल दो साल रोज दाढ़ी बनाकर चिकना-चुपड़ा घर में बैठा रहा । परन्तु एक दिन बेटे ने मारी लात और कहा—'क्या दिन भर घर में पड़े रहते हो । जाओ साहित्य की चर्चा करो अपने समानधर्माओं में जाकर टाइम पास करो । घर में पड़े-पड़े हमारी सीक्रेसी डिस्टर्ब क्यों करते हो ।'

साहित्यकार घर से निकला तो सब ने मुंह फेर लिये । कोई बात नहीं करना चाहता था उससे । मेरे पास आया तो मैंने कहा—'तुम आ गये साहित्यकार ।'

'हां मैं जमीन पर आ गया हूं ।'

'देखो टटोल लो अच्छी तरह । फिर कहीं हमारे जैसे घटिया लोगों के साथ बैठने से तुम्हारे अफसर को ठेस न पहुंचे ।' मैंने कहा ।

'अफसर साहित्यकार दुम हिलाकर बोला । 'मुझे सुबह का भूला समझकर माफ कर दो ।'

मैंने कहा—'तुमने पूरे साहित्य क्षेत्र के साथ धोखा किया है । सेवानिवृत्त हो गये तो आ गये हमारे बीच पिछले तीस सालों तक मूंग दलते रहे । चलो पहले माफी मांगो ।' साहित्यकार रो पड़ा । मैंने उसे गले से लगाया और कहा—'चलो छोड़ो रोना-धोना, अब हंसो थोड़ा सा ।' साहित्यकार हंसने लगा । फिर से कविताएं लिखना तो शुरू कर दिया—परन्तु अभी भी लोग उसे 'वही' कहते हैं । □

संस्मरण

स्मृतिशेष चित्रकार जगदीश स्वामीनाथन

'देर तक पीछा करेगी उनकी चिड़िया......'

□ डॉ० देवव्रत जोशी

उनके कक्ष में एक ताज़ा पेंटिंग।...इस चित्र में एक शिलाखंड...और शिलाखण्ड से टूटता एक पत्थर ..और पत्थर के समानान्तर उड़ती एक चिड़िया।...

मैंने उस दिन पूछ लिया था—"दादा, आप दो दशक तक चिड़िया ही उकेरते रहे हैं...!"

"मेरी हर चिड़िया की भंगिमा, एंगल—ध्यान से देखो—कितनी भिन्न हैं हर पेंटिंग में।"

जगदीश स्वामीनाथन प्रयोगधर्मी चित्रकार थे। बेशक, आधुनिक चित्रकला के सुमेरू, एक जीनियस। प्रतिभा अपने को दुहराती नहीं। चिड़ियां स्वामी जी का मोह नहीं, जिजीविषा थीं जो विभिन्न रूपाकारों में अभिव्यक्त होती थीं।

जीवन के उत्तरार्द्ध में तो वे लोककला के भक्त' ही बन गए थे। मध्य प्रदेश के आदिवासी अंचलों में उनकी जीप दौड़ती और लोकांचल के चितेरे भारत भवन में आते... स्वामीनाथन भूमिपुत्रों की 'मासूम' उभरती कलाकृतियां देखते...घंटों, तन्मय।

"ये अमूर्त्तकला आखिर आम आदमी के किस काम की बिल्कुल समझ के बाहर..."

"ज़रूरी नहीं कि कला को सब समझें ही। इन आदिवासियों की कलाकृति क्या शहर के लोग समझते हैं ?...जैसे, जितने कलात्मक संस्कार होंगे, उतना ही तो ग्रहण करेंगे लोग।"

शीर्षस्थ कलाकार जगदीश स्वामीनाथन फक्कड़ मिजाज़ वाले, दो टूक बात कहने वाले इन्सान थे—बहुत प्यारे।

"एक अध्यात्मिक मासिक पत्रिका बी० के मित्रा, जगन्नाथ, भगवान आदि चित्रकारों के बेहद खूबसूरत, मोहक चित्र वर्षों से प्रकाशित कर रही है। आपकी क्या राय है उन चित्रों के बारे में ?" बालकवत जिज्ञासा से मैं उनसे जाने क्या-क्या पूछ लिया करता।

स्वामी जी कहते—"भाई एक्सपेरिमेन्ट ज़रूरी है। मेहनत मजदूर भी करता है, बुद्धिजीवी भी। नई बात क्या कही या चित्रित की, महत्व इसका रहा है सदा से। रवि वर्मा के केलेन्डरी चित्र बाज़ारों में खूब बिके। लेकिन वहां आई है क्या ?...

मुझे पहाड़ी शैली ने प्रभावित किया है।...और अपना 'फार्म' मैंने खुद अपनी कल्पना से सिरजा है।"

देर तक राजपूत-कलम, काँगड़ा कलम तक बात होती रहती थी। खजुराहों अजन्ता के भित्तिचित्रों पर भी वे अपनी मौलिक सोच प्रस्तुत करते थे।

एक दिन मैं ने पूछा—"कलागुरु अवनीन्द्रनाथ नन्दलला बोस...इन लोगों ने भारतीय चित्रकला को नया मोड़ दिया...आप स्वीकारते हैं ?"

प्रश्न का उत्तर चौंका गया—"सब पश्चिम...वेस्ट की नकल ! हॉवेल से प्रभावित अवनीन्द्र और बोस ने अजन्ता शैली को अपने चित्रों में उतारा।"

"शाकिंग ! ये आप क्या कह रहे हैं ? लिख दूं क्या ?"

"शोक से लिखिये न। आप क्या लिखेंगे। वर्षों पहले मैं खुद लिख चुका हूं।"

स्वामीनाथन परम्परा से जुड़े होकर भी क्रान्तिकारी' कलाकार थे। हरदम नये प्रयोग, नयी कृतियां।

लेखकों, बुद्धिजीवियों की गोष्ठी में उनकी शिरकत अपनी छाप छोड़ती थी। अरविन्द-शताब्दी-समारोह में "साहित्य और आस्था" विषय पर आयोजित गोष्ठी में विजयदेव नारायण साही, निर्मल वर्मा, नेमिचन्द्र जैन, प्रभाकर माचवे से बिल्कुल अलग कथ्य था उनका—मौलिक और विचारोत्तेजक।

"आप 'धार्मिक' हैं क्या ? लम्बी दाढ़ी, लम्बे बाल...बिल्कुल बाबा लगते हैं आप। बस भगवे चोले की ज़रूरत है।"

इस बार उन्होंने ठहाका नहीं लगाया। गंभीर हो आए—"मैं वेदान्ती हूं। लेकिन शंकराचार्य से मेरे कुछ डिफरेनसेज़ हैं। मैटर एंड माइंड...(वे बुदबुदाए)...और गहन दर्शन-चर्चा चल पड़ी थी।

"स्वामी जी, तुलसी को तो आपने पढ़ा होगा। मुझे वे कवि जरा कम लगते हैं।..."

"आप अपनी बात मुझसे मत मनवाइये। मैंने कई बार तुलसी का मानस पढ़ा। ही इज ए ग्रेट पोएट।" उनका दो-टूक उत्तर था।

जे० स्वामीनाथन की जिन्दगी किसी रोमांचक उपन्यास से कमतर नहीं थी। स्कूल में मन नहीं लगा। पिता के टोकने पर भी चित्रों का संसार ही अपनाया। कांटों भरा रास्ता। जे० जे० स्कूल आया आर्टस में दाखिला नहीं मिला। कांग्रेस—सोशलिस्ट पार्टी में काम किया। चित्रकारिता छोड़ कर फ्रीडम-मूवमेन्ट में आए। जयप्रकाश जी से तीव्र मत-भेद .. कम्युनिस्ट बने। राजनीति से मोहभंग हुआ, अन्ततः विशुद्ध चित्रकार बन कर शेष जीवन गुजार दिया।

फक्कड़, बेलौस, रमते जोगी स्वामीनाथन को कोई शैली नहीं बाँध सकी। सरकार के पिंजरे भी उनकी मस्त, जिजीविषा भरी उड़ान को ज्यादा कैद नहीं रख सके।

मेहमाननवाज़ स्वामी जी ककड़ी के टुकड़ों पर नींबू और नमक लगा कर मुझे देते हुए बोले थे एक बार--

''लोककला मेरा आखिरी मोड़ आखिरी पड़ाव है। यह कला अपनी अलग अस्मिता, पृथक पहचान रखती है। विज्ञापन और प्रचार से अपरिचित आदिवासियों के स्फूर्त चित्रों के सामने हम "अमूर्त्त लोगों" की पेंटिंग्ज़ पानी भरती है, सच कह रहा हूं। (हंसते हुए) यह भी लिख लो और मैं सोचता रह गया कि......।"

अनन्त में उड़ती स्वामी जी की चिड़िया देर तक, दूर तक पीछा करती रहेगी।... □

कभी आपने देखा है

□ प्रेम विज

कभी आप ने देखा है
स्वयं को
खूंटी पर टंगे वस्त्र की तरह
लोग अक्सर खूंटी पर
यादें टांग देते हैं
पुरखों की अस्थियां भी
गंगा में विसर्जित करने से पूर्व
लोग टांग देते हैं
कुछ लोग खूंटी पर
ईमान भी टांग देते हैं
यह खूंटी की हिम्मत है कि
वह धरोहर के रूप में
सब कुछ सहेजे रखती है
—पुरखों की अस्थियां
आदमी के अस्तित्व
उस की अस्मिता और ईमान को भी
और फिर मांगने पर
जस की तस चदरिया धर देती है
दरअसल खूंटी
अस्मिता की पहचान है हमारी
जिस पर हमारे पुरखों को
असंख्य परी कथाएं वो
डेरा डाले रहती हैं
हमारे विश्वास भी
टंगे रहते हैं
और बोधि वृक्ष की तरह
हम में जगाते हैं प्रश्न
और जगाते हैं
अनंतता बोध की।

□

आम

□ यादवेन्द्र शर्मा

फिर आयेंगे आम
रसीले महकदार
कि राह चलते खींच लेंगे

आम खाएं
हर साल सोचते हैं
कितने ही जन
पर बीत जाती है ऋतु

अब के फिर लदी हैं टहनियां
सुन्दर हैं पेड़
पर यह तो है महज आंखों का धोखा
सिर्फ उनके हैं आम
जिनकी जेब में है पैसा। □

प्यार

छोटी छोटी भूलों से
बनता एक शब्द—प्यार

प्यार एक पगडंडी है
दो जिस्मों की
परस्पर तनी हुई छाया है
प्यार अल सुबह फूटती
कलियों की हंसी है
बांहों में प्रेमिका की कसमसाहट है

प्यार एक उलाहना है
खुद को मिटाने की ज़िद है
एक जादू है
बहारों का। □

तीन बावड़ियां

तीन बावड़ियां
जैसे तीन सहेलियां अकेली !

सर्दियों में उन पर
गिरते सूखे पत्ते
ग्रीष्म में सूरज की किरणें नहाती हैं
तीन बावड़ियां अपने एकांत में
गप्प मारती
ठहाका लगाती हैं

चौंकता राहगीर
मगर नहीं सुन पाता
उनकी बातचीत

ठण्डे मीठे जल की
जाने किन युगों से
वह रहीं हैं चुपचाप ।

□

घर–परियोजना के बाद

बहुत से घर खाली पड़े हैं
उन्हें आबाद करने वालों के पते
शायद किसी के पास हों

दीवारों पर अंकित हैं चिन्ह
दरवाजों पर खुदे हैं नाम
जैसे यहीं हों इनमें रहने वाले
पर कोई नहीं
एक उजाड़ है
घरों के बीच
उग आया है घास का जंगल

अब यहां कोई नहीं आयेगा
परियोजना-कार्य सम्पन्न हो चुका है ।

□

ग़ज़ल

□ द्विजेन्द्र द्विज

हर एक पेड़ को काटा है बारी-बारी से,
यह काम उसने लिया नफरतों की आरी से ।

हुई हैं मुद्दतें कर्ज़ अदा किए उसके,
अभी भी तंग हैं हम उसकी साहूकारी से ।

फिर वही एक तमाशा रहे वही करतब,
कैसी उम्मीद करें अबके हम मदारी से ?

वो आगे करता है केवल बलि के बकरों को,
वो टलता आया है हर रोज जिम्मेदारी से ।

वो रस्ता जिस पे लौटे न मसीहा के कदम,
क्यों उसको तकते रहे लोग बेकरारी से ?

ये तेरे ख्वाब भी फूलें-फलेंगे ठहर ज़रा,
बहुत संभाल के रख इनको होशियारी से ।

हूं बेकरार कि जादू वो फिर से हो जाए,
परिंदे ले उड़ें ये जाल भी शिकारी से ! □

बाज़ार

डॉ० ए० अरविंदाक्षण

अध्यापक ने सवाल किया :
'बाज़ार किसे कहते हैं ?'
विद्यार्थी ने जवाब दिया
'जहां चीज़ें बिकती हैं
जहां लेन-देन होता है
भाव पर दांव-पेंच होती है
लोग-बाग अपनी पैनी दृष्टि का इस्तेमाल करते हैं।'
विद्यार्थी सकपकाए
'बाजार कितने प्रकार के हैं ?
वह बोला
'तरकारी का बाज़ार
कपड़े का बाज़ार
चावल का बाज़ार
सट्टा बाज़ार
और'
विद्यार्थी रुक गया
अध्यापक ने
फिर सवाल किया
'बाज़ार की रूह होती है ?'
विद्यार्थी जड़ विहीन हो गया
वह बाज़ार की रूह के साथ उड़ने लगा
उसने देखा
बाज़ार की रूह
हर बाज़ार के पिछवाड़े में किसी से कानाफूसी करती है
तभी हमारा बाज़ार जगता है
रूह के साथ-साथ उड़ते हुए उसने कहा
'बाज़ार कुछ और है
उसका घर-परिवार है
उसके पास हथियार हैं
वही सचमुच बाज़ार है' ।

फूलों ने कहा

उस घाटी के खूबसूरत फूलों से
मुझे चिढ़-सी होने लगी
इनकी खुशबू कहां गई ?
इनकी मासूमियत को क्या हो गया ?
चिनार के ये पेड़ चुप खड़े ताकते क्यों हैं ?
झीलों में यह मायूसी क्यों ?
सभी घूर क्यों रहे हैं ?
फूलों ने कहा
हम लगातार खुशबू बिखेरते रहे
रंगों का पर्व मनाया
तितलियों के गीत गाए
पर किसी ने हमें करीब से नहीं देखा
हम कटते गए
सजते गए
सूखते गए
हमारे लिए तितलियां रोईं ।
मैंने उन फूलों को करीब से देखा
सुबह का समय था
ओस के कणों को मैंने पोंछा पर
आंसू के कण थे जो चिपके रहे । □

तपती धूप में

□ भगवान देव 'चैतन्य'

तपती धूप में
आग उगलते रेगिस्तान की बातें करना
कितना आसान होता है

बड़ी सहज सी लगती है
ज्वालामुखी पर्वतों से बहते हुए
गर्म-गर्म लावे की चर्चा

चौराहे पर किसी मदारी का
आग के अंगारे निगलना
जीभ काटना
और आरे से कटती गर्दन देखना
बड़ा रोमांचक लगता है

किसी वीरान खण्डहर
या काले-काले पत्थरों पर घास उग आए
किसी किले की यात्रा
बहुत अच्छी लगती है

पर इतना आसान नहीं होता
रेगिस्तान का सफर
सहज नहीं होता

ज्वालामुखी का पिघलना
रोमांचक नहीं होता
अंगारे निगलना
जीभ कटवाना
या गर्दन पर आरा चलवाना

वहुत भयानक और त्रासद होता है
खण्डहर का अपना सफर
उजड़-उजड़ कर वीरान होने की प्रक्रिया

किसी भी किले को अपनी यात्रा
सहज और सरल नहीं होती : :
उसके हर पत्थर की अपनी एक गाथा होती है
एक इतिहास होता है
और इतिहास—
यों ही नहीं बन जाते ।

□

बच्चे

घर के चिराग
खेलते फिरते हैं
घर-भर में
रोशनी बिखेरते
रुठते हैं
मनते हैं, हठीले
बहल जाते हैं
ज़रा से प्यार मनुहार से
चुहल, किलक
फूल, हंसी
कानों में अमृत
ऊंचा कर जाता है मुझे
अचानक
अपना मुकम्मल औरत होना

□

औरत

□ नीलम महाजन

ढोती पहाड़-सी
ज़िन्दगी,
धरती है औरत
साक्षात धृति
कितना कुछ उगा
है उसकी कोख से
कोख के फूल
फूलों की सुगंध
शौर्य, जप, तप
दर्शन, पांडित्य,
अक्षर-अक्षर
रंग-रंग
लालित्य,
पर किसी ने न बांटा
उसका बोझ
उसका दर्द
दरअसल
उसमें
'जो' है ,
वह बांटा ही कहां जा सकता है □

रोशनदान की याद

□ महाराज कृष्ण सन्तोषी

आज सहसा याद आया
वह रोशनदान
जिस ने मुझे कभी नहीं रोका
प्रेमिका का चेहरा देखने से
जिस की चौखट छूते ही
धूप, रोशनी, हवा की उत्सुक बूंदें
कितना सकून पाती !
जो किन्हीं चालाक हाथों के अनुशासन से
सदा रहा मुक्त !
क्या इतने बरस
मैं भूल गया था
वह रोशनदान !
सोचता हूं
शहर की चकाचौंध के बीच
मैं जो इन आंखों को
तपा रहा हूं
और इन लुटेरी हवाओं की थापें
सह रहा हूं
ऐसे में सहसा स्मरण हो आना/वह रोशनदान
क्या शुभ नहीं हैं
मेरे यार !

□

जाते-जाते

□ सुजाता

जाते-जाते
दोस्त दे गया
बिना जिल्द की किताब
किताब क्या थी
पन्ने थे
जिन का रख-रखाव करना था।
मौसमी मार से बचाना था
पीछे लग गया खटका
करना होगा जुगाड़
बैठी थी
कि सोच रही थी
—हवा जो चली
फर्राटेदार
उड़ने लगे पन्ने
ढूंढें न मिला कोई पत्थर न ईंट।
लकड़ी या लोहे का भारी टुकड़ा
अपना हाथ रख दिया
पेपरवेट की तरह उन पर
आखिर तो उन्हें
उड़ने से बचाना था। □

पहाड़, कोहरा और ग्लैडियोलाई

□ किरण बख्शी

उसके हाथ से बैग और सूटकेस लेकर सिद्धार्थ चढ़ाई चढ़ने लगा। इस दूरस्थ पहाड़ में यों इरा का अचानक आ जाना कैसा तो सुखद आश्चर्य है। पर दूसरे ही क्षण उसने सोचा—जिस एकांत की इच्छा करते हुए उसने एक सप्ताह की अतिरिक्त बुकिंग करवाई है, उसे भोग शायद ही सकेगी। पर फिर उसे अपना आप टुच्चा सा लगने लगा। जाने किस मुश्किल से आ पाई होगी वह, दिल्ली से इतना लम्बा सफर तय करके। कितना तो समय का अभाव रहा होगा उसके पास। आखिर लन्दन से कोई कितना समय लेकर आ सकता है, वह भी नया-नया जॉब ज्वाइन करने के फौरन बाद। वह काफी ऊपर आ चुका था, उसने पीछे आती इरा को देखना चाहा। पीछे मुड़ा—देखा, इरा कई गज़ नीचे एक बड़े पत्थर पर बैठ कर उसी दिशा में देख रही थी। थक गई होगी शायद वह, पीछे मुड़ने को हुआ तो उसने मना कर दिया—"चलते रहो सिद्धार्थ बादलों की धुन्ध में से राह बनाते हुए आगे बढ़ते हुए लग रहा है तुम जमीन पर नहीं आकाश में चल रहे हो। धुंध में खोकर नमूदार होता हुआ तुम्हारा वजूद अच्छा लग रहा है। मैंने पहले ऐसे नीचे उतर कर जमीन को छूते हुए बादल कभी नहीं देखे।"

उसके आदेशानुसार उसे अपनी हट का नम्बर बता कर वह आगे बढ़ता रहा—सोचता रहा—"इरा तो अब भी वैसी ही चंचल और बेसमझ लग रही है, गृहस्थी की सार सम्भाल कैसे कर पाती होगी? अमित तो खैर है ही दार्शनिक, शायद उसकी नादानियां उसे नज़र ही न आती हों। हांफती हुई इरा सीधी उसी कमरे में आ गई जिसमें वह बैठा था। उसने चारों ओर निगाह घुमाई बोली—"वाह क्या ठाठ हैं। ऐय्याशी हो रही है।"

"दिल्ली में रहने वाले मध्यवर्गीय जीव के लिए यह तीन कमरों वाली हट, वह भी पहाड़ पर किसी स्वर्ग से कम नहीं।"

"यकीनन। कभी-कभी कलाकार होना भी लाभदायक होता है। बहरहाल इस समय तो आभारी हूं अकादमी का।" दोनों हंस दिए। सिद्धार्थ ने किचन में खौलते हुए पानी की आवाज़ सुन कर कहा—

"तुम हाथ मुंह धोकर फ्रैश हो लो, मैं काफी लाता हूं। साथ में क्या लोगी?"

"मैं फ्रैश हो ली समझो, तुम कॉफी ले ही आओ, खाने के लिए कुछ भी चलेगा।" उसकी हड़बड़ी देख सिद्धार्थ को हंसी आ गई, उसने जोड़ दिया, "एज़ इम्पेशंट एज़ ऐवर" (हमेशा की तरह बेसब्र) और किचन में चला गया। कॉफी पीते हुए उसने पूछा, "मेरा पता कहां मिला?"

तुम्हारे आफिस गई थी, चौधरी मिला, उसी ने बताया कि तुम कैम्प कर रहे हो।"

"पर कैम्प तो सात दिन बाद खत्म हो गया था, मैंने तो बुकिंग एक्सटेंड की है।" सिद्धार्थ ने कहा।

"यही, यही शायद मेरे लिए अच्छा हुआ। तुमने सुखबीर को फोन किया होगा, उसी से मालूम हुआ कि तुम कुछ देर और यहां हो। बस भईया-भाभी को शिमला का बता कर निकल पड़ी। जम्मू से तुम्हें फोन से सूचित करना भी नहीं चाहती थी, पर सोचा तुम्हें कोई असुविधा न हो इसलिए पूर्व सूचना दे ही दी।"

"इस सबके पीछे कारण क्या सिर्फ मुझे सरप्राईज़ देना ही था?"

"नहीं सिद्धार्थ, कारण तो कई एक हो सकते हैं और यह भी हो सकता है कि कारण कोई ही न हो। बहरहाल आ गई हूं तो झेलना तो पड़ेगा ही।" उदासी भरा था उसका स्वर। साफ देख सका सिद्धार्थ।

"ऐसा क्यों सोचती हो। यू आर आलवेज़ वेलकम।"

"तुम यहां क्यों रुके हो, यहां के एकांत को भोगने, या फिर.."

या फिर जम कर पीने, यही कहना है न तुम्हें! नहीं, मैं अब उतना नहीं पीता। तुम यहां रुकोगी तो जान जाओगी कि पहाड़ किसी विशेष वर्ग के लिए किसी विशेष मौसम में अन्धाधुंध पैसा बहा कर ऐश्वर्य भोगने के साधन ही नहीं बहुत कुछ और भी हैं। नई संवेदना, नई अनुभूति, नई पुष्टि नयी सम्प्रेषणीयता, नया चिन्तन, अपने छोटे-छोटे दुखों को एक बड़े परिप्रेक्ष्य में देखने का ढंग सीखा है मैंने। पूरा जीवन दर्शन बिखरा है यहां, केवल वह आंख चाहिए जो देख सके, पहचान सके, वह खामोश हो गया। इरा उसके ताज़े बने चित्रों को देख रही थी। उसकी शैली में बदलाव आ रहा था, रंगों का चुनाव भी सजीव और ताज़ा-ताज़ा सा लगा। जबकि इन रंगों का उतना प्रयोग नहीं हुआ था।

उसके पास आ गया सिद्धार्थ और जंगल की ओर खुलने वाली खिड़की से उस पार देखते हुए बोला—"यहां आकर मैंने रंगों के नए शेड्स देखे हैं—एक ही दिन में कई-कई मौसम भोगे हैं। बादलों के कई आकार छुएं हैं। पेड़ों पर बरसती चांदनी देखी है। डार-डार सोहा संगीत जग कर मुखर होता देखा है। आकाश को पृथ्वी पर उतरते देखा हैं। नींद से जागती हवा के वाद्य पर बजते पहाड़ी नदी के सुर सुने हैं। इतना कुछ दिया इन पहाड़ों ने मुझे इसका कुछ अंश अपने चित्रों में सहेज लूं कुछ देर और उसे अनुभूत कर सकूं, बस इसलिए रुका हूं।

"तुम लन्दन से कब लौटीं? कब तक रहोगी!"

इस प्रश्न के लिए इरा अभी तैयार नहीं थी, सो थोड़ा रुक कर बोली—"लन्दन से आए दस दिन हो गए हैं, कब तक रहूंगी नहीं जानती।" यह सुन कर सिद्धार्थ के चेहरे पर चिंता आ जाना स्वाभाविक था। इरा ने स्वयं ही उसकी मुश्किल आसान कर दी—

"आई एम फायर्ड फ्राम जॉब। खाली थी इसलिए आ गई।"

"तुम्हें काम से बर्खास्त कर दिया।"

"पर क्यों ?"

"तुम्हें किसी फर्म में कान्ट्रेक्ट मिला था न।"

"मैं वहाँ के नियमों का पालन नहीं कर पाई और बीच-बीच बिना पूर्व सूचना के अनुपस्थित भी रही।" इसके साथ ही वह एक ढीठ हंसी हंसने लगी।

तुम अभी भी उतनी ही डिफीकल्ट हो।" सिद्धार्थ ने उसके कन्धे पर हाथ पटक कर कहा। इस स्पर्श ने इरा को गम्भीर बना दिया। उसने उसकी आंखों में देखते हुए कहा—"पूछोगे नहीं सिद्धार्थ कि लंदन से अमित और पारस को छोड़ कर अकेली कैसे आई हूं ?"

"कोई अपने देश वापिस क्यों लौटता है, यह क्या मुझे पूछ कर जानना होगा। यदि कोई पारिवारिक समारोह नहीं तो फिर वही नॉस्टैलजिया होगा। तुम्हारे जैसे अनिश्चय में रहने वाले लोगों पर उसका जब तब हावी हो जाना कोई नई बात नहीं। अमित साथ नहीं यह तो समझ में आता है, उसकी छुट्टी का झंझट रहा होगा पर पारस को छोड़ कर आई हो तो ज़रूर कोई विशेष कारण होगा तुम्हारे पास।" पारस का ज़िक्र आते ही इरा गम्भीर हो गई, उसकी आंखों में उतर आयी नमी सिद्धार्थ देख सका था, पर इस समय वह उसे कोई प्रश्न पूछ कर दु.खी नहीं करना चाहता था। कुछ देर रुक कर स्वयं उसने ही कह दिया—

"सच पूछो तो सिद्धार्थ, इतनी दूर से मैं केवल तुम्हारे लिए ही आई हूं। भईया-भाभी को बताया है कि शिमला होकर फिर दीदी के पास जाऊंगी। उन्हें यह भी हिदायत की है, कि अमित का फोन आए तो कहना मैं उसे स्वयं फोन करूंगी शिमला से।" सुन कर अवाक रह गया वह।

"इरा वट डू यू मीन, तुम लन्दन से केवल मेरे लिए आई हो अपना घर पति और बच्चे को छोड़ कर।" उसने सीधे उसकी आंखों में देख कर पूछा।

जवाब में आंखें नीचे कर लीं इरा ने, "हां सिद्धार्थ केवल तुम्हारे लिए आई हूं मैं, तुम मेरा विश्वास कर सकते हो !"

"पर क्यों इरा, क्यों आई तुम ? झूठ बोला तुमने ? तुम जो करती हो उसके आगे-पीछे कुछ क्यों नहीं सोचती ? कब तक...आखिर कब तक यह गैर जिम्मेदाराना हरकतें करती रहोगी। तुम ? और तुम्हें जरा भी नहीं लगा कि अमित इस सबको कैसे लेगा ? भइया-भाभी तो खैर पचा ही लेंगे। और मैं...मैं कैसे लूंगा इसे ? मुझे तो तुम हमेशा ग्रांटिड ही लेती आई हो...ओह ! इरा तुम नहीं जानती कि तुम क्या करती हो।" खामोश छत को निहारता रहा सिद्धार्थ। पथराए मौन की चुभन सहती रही इरा। जब कुछ सहज हो गया तो सिद्धार्थ ने पूछा, "चाय लोगी ?"

"नहीं।"

"सिद्धार्थ, मेरे प्रश्न का ईमानदारी से उत्तर दो तो पूछूं।" उसने स्वीकृति में उसे देखा।

"यदि मेरी जगह तुम्हारा कोई पुरुष मित्र तुम्हारे पास आया होता—या तुम्हीं किसी महिला मित्र के पास चले गए होते तो यह सब प्रश्न किए जा सकते थे ? तुम भटक सकते हो...अमित भटक सकता है...मैं, केवल मैं ही अपनी तरह नहीं जी सकती, भटक सकती...।" इरा रुआंसी हो रही थी। वह खामोश हो गई। कुछ पल समय थमा सा रहा। बादलों की ढेर सी आर्द्रता उन दोनों के बीच के शून्य में भर गई। फिर धीरे-धीरे विगलित हो गई। सिद्धार्थ इस बीच काफी हद तक सहज हो चुका था। उसने दोनों हाथ इरा के कन्धों पर रख कर कहा, "सारी इरा, मैं स्थिति को कुछ ज्यादा ही गम्भीरता से ले रहा था। बी ईजी "... .." इरा ने अपने कन्धों पर टिके उसके हाथों को आंखों तक खींच लिया था और फिर उनमें मुंह छुपा कर रोती रही थी। बिना हिले डुले खड़ा रहा था वह। उसने उसे रोने दिया था। स्वयं उसकी भी इच्छा हो रही थी कि जम कर बरसात हो बाहर भी भीतर भी। जैसे बाहर होने वाली बरसात के बाद सब कुछ साफ शफ़ाफ़ निथरा-निथरा-सा अपने सही आकार में दिखाई देता है, वैसे ही रो लेने से मन के कोने-कोने में छुपा अवसाद, धुल पुंछ जाता है और फिर बिना किसी कोशिश के पढ़ा जा सकता है उस पर लिखी इबारत को। सिद्धार्थ सोचने लगा काश, काश वह भी रो सकता। इरा को इसी स्थिति में छोड़ कर वह बाहर आ गया और घास पर लेट कर आकाश को निहारता रहा जब तक कि आसपास की रोशनियां न जल गईं। उसने चेहरे पर, कपड़ों पर, बादलों की आर्द्रता को महसूस किया। वह उठ कर बैठ गया देखा पीछे कुर्सी डाल कर इरा बैठी थी।

"तुम कब से यहां हो ? चलो भीतर चलो, ठंड लग जाएगी।"

इरा भीतर चली आई। सिद्धार्थ ने पीछे की बालकनी का दरवाजा खोल दिया था। यहां से देवदारों के बीच में से निकलने वाले पतले रास्ते को देखा जा सकता था। गहरे हरे और ब्राऊन देवदारों के बीच में से निकलता रास्ता चमकती हुई नदी की धार जैसा लगता था। इरा का मन हो रहा था इस जंगली रास्ते पर दौड़ती चली जाए और धीरे-धीरे शून्य होता जाए उसका वजूद। बिखर जाए, फेड आऊट हो जाए इन रहस्यमयी वादियों में किसी पक्षी के 'लिंगरिंग' गीत की तरह।

सिद्धार्थ इस बीच कुछ सनैक्स ले आया था। "इरा संगीत सुनना चाहोगी। तुम्हारा फ़ेवरिट मेंहदी हसन है मेरे पास और वह फोक गाने वाला तुफ़ैल न्याज़ी भी। वैसे आजकल मैं रोशनआरा बेगम और बड़े गुलाम अली खां का फैन हूं। कुछ अच्छा वाद्य संगीत भी है मेरे पास सुनोगी ?"

"नहीं सिद्धार्थ, इस समय तो अनोखा संगीत सुन रही हूं मैं, बल्कि अपने भीतर रचा रही हूं उसे। अभी शाम को देवदारों के बीच में से होकर आती हुई हवा में गूंजती, खनकती शंख ध्वनियां देर तक सुनती रही थी मैं। आज दूसरे पहर सुनहरी अलसाई धूप में अल्हड़ अठखेलियां करते पहाड़ी नाले का शोर कैसा तो जान लेवा था। और अब—सुनो तो—पेड़ों की फुनगियों पर झर-झर झरती चांदनी की खामोश रागिनी......इस से परे संगीत क्या

होगा ? ठीक कहते हो तुम यहां रह कर मनुष्य बहुत कुछ पा लेता है, मुझे नहीं मालूम था कि मुझे इस संगीत की भी कभी तलब थी पर अब लगता है कि इसके बिना मेरी आत्मा कितनी अतृप्त रहती ।"

सिद्धार्थ अपने लिए ड्रिंक बनाने लगा तो उसने कहा, "एक मेरे लिये भी ।"

"ओह नो तुम नहीं लोगी । पहले कभी ली है ?"

"डरो मत डियर, विलायत में रह कर कभी-कभार लेने से परहेज नहीं मुझे । पर ज्यादा स्ट्रांग ब्रांड नहीं ले पाऊंगी ।"

सिद्धार्थ ने ड्राई जिन का ड्रिंक बना कर उसके हाथ में दिया, लगा कि वह सहज नहीं ले रहा इसे । इरा ने कहा, "डरो मत सिद्धार्थ, आई प्रामिज़, आई वोन्ट गेट ड्रंक ।" दोनों खामोश थे, पर कुछ था जो उस खामोशी में भी मुखर था ।

"कुछ कहो इरा, तुम खामोश रहो अच्छा नहीं लग रहा ।" 'मेरी एक बात रखोगे सिद्धार्थ। 'कहो' सिद्धार्थ ने उसके निकट आकर पूछा । "मेरा मन इस पगडंडी से नीचे जंगल में उतरने को हो रहा है । अब यह मत कहना की ठंड लग जाएगी । उसका इन्तज़ाम तो हो चुका है।" सिद्धार्थ कुछ सोच में पड़ गया, फिर बोला—"विचार बुरा नहीं बट लेट मी हैव वन मोर ड्रिंक।"

"और एक मेरे लिये भी, आखिरी एक ।" इरा भीतर स्वेटर पहनने आ गई । उसने सिद्धार्थ के लिये गहरे उन्नाबी रंग का पुलोवर निकाला जो वह लन्दन से लाई थी और ड्रिंक खत्म कर नीचे उतरने लगी । इस बीच सिद्धार्थ ने एक पैग और गटक लिया और टार्च लेकर उसके साथ हो लिया । अन्तिम लैम्प पोस्ट की रोशनी में उसने मुड़ कर इरा का चेहरा देखा । गहरे भूरे, घुंघराले बालों की फ्रेम में जड़ा हुआ गुलाबी मुखड़ा और उस पर आंखों में तैर रहा पनीला सरूर । उसे किसी जिप्सी बाला की याद हो आई जिसे उसने किसी प्रदर्शनी में जिप्सी गीत गाते सुना था ।

"तुम बहुत सुन्दर हो इरा ।"

इस बार खुल कर हंसी थी वह, सुनसान सोये पहाड़ों में काफी देर के बाद फेड आऊट हुई थी उसकी आवाज़ । क्या यह वास्तव में हंसना था, या आत्मा से उठती हुई चीख—या स्वयं अपने होने का उपहास करती हुई निर्मम हंसी ।

निशब्द बढ़ते रहे थे वे । ऊबड़-खावड़ रास्तों पर संगीत रचते उनके लयबद्ध कदम और बीच-बीच में एक बड़े हिचकोले से डोल जाता उसका सन्तुलन और फिर सिद्धार्थ की देह को धकियाता-सा इरा का अलसाया मदमस्त बोझ—उसे वापिस सन्तुलन में लाने, उसके पांवों को लयबद्ध गति देने की सिद्धार्थ की कोशिश—सब समझती है इरा । अदृश्य को सूंघ लेने की उसकी आदत तो थी ही । सिद्धार्थ की ओर से सायास उसे अपने से दूर रखने की कोशिश, किसी अनचाहे ऐक्य से सुरक्षित रहने का प्रयास उसे साफ महसूस हो रहा था । जिनके हल्के नशे में चीजें एक झीने आवरण के नीचे ज़रूर दिखाई देती हैं पर उनका आकार सही महसूस होता है । काफी नीचे उतर कर खुले में बैठ गए थे वे । उनके बीच भर गया था ठंडा फ्रीज़ होता हुआ मौन । फिर भी कुछ ठिठुरे स्पर्श, पिघलती-सी पीड़ा, झीना-

सा सुख---आधा अधूरा-सा कुछ पा लेने का सुख—मौन एक दूसरे की सांसों को छूने का सुख तो था ही" पर कब तक ? हाथ पकड़ कर सिद्धार्थ ने उसे उठने को कहा था। पिये हुए होते भी उसके स्पर्श में कोई ऊष्मा नहीं थी। चुपचाप चढ़ाई चढ़ते रहे वे---धीरे-धीरे लौट आई उसकी तन्द्रा। साफ उभरने लगे नक्श। उसे सायास परे रखने की कोशिश—शायद उसे दण्डित करने की इच्छा से, या फिर उसके कमज़ोर क्षणों का लाभ न उठाकर, शहादत का एहसास पाने की तृप्ति के लिए—और फिर हर्ट होती हुई उसकी अस्मिता, सब कुछ एक न झुठलाया जा सकने वाला सत्य था। वापिस हट में आकर उसने अपने कमरे में रोशनी भी न जलाई थी और 'गुडनाईट' कह कर एकदम सोने का वहाना बना कर दरवाज़ा बन्द कर लिया था।

सिद्धार्थ किसी अधूरे चित्र को पूरा करने में जुट गया था—सुबह चार बजे तक उसके कमरे में रोशनी जलती रही थी।

पत्नीटॉप में कब धूप निकलती है और कब बारिश आती है, कोई नहीं कह सकता। मौसमों की यह आंखमिचौनी ही तो इसकी सुन्दरता है। कई बार तो यह तय करना भी कठिन हो जाता है कि कहां उजाला शुरू होता है और कहां अन्धेरा खत्म होता है। कभी दिन में रात की सी कैफियत और कभी रात में दिन का सा उजाला। उस रात भी अच्छी भली चांदनी को पोंछते हुए बादल गहरा गए थे, और आनन-फानन जम कर हुई थी बरसात—टूट-टूट कर बरसा था पानी। उसके कमरे तक आए थे एक जोड़ी कदम, ठिठके, ठहरे और फिर थके-थके वापिस मुड़े थे। आंसुओं की बाढ़ में डूबता उतराता रहा था मन। होती रही थी बरसात इस पार भी और उस पार भी। कुछ देर बाद धुल गया था मन का अवसाद तो जन्म लिया था एक अनोखे तर्क ने। इरा ने पहली बार जाना था कि दु:ख किसे कहते हैं और यह कि किसी दूसरे के दु:ख का अन्दाज़ किए बिना अपने को उससे अधिक दु:खी मानना एक ओछा आत्म दया का प्रयास ही तो है।

सुबह वह, जल्दी उठ गई थी। सिद्धार्थ सो रहा था। हैंग-ओवर तो नहीं हो सकता था, पर रात देर तक काम करने की थकान अवश्य रही होगी। गुलाबी सिल्क के गाऊन पर मोतियाई आब वाला पश्मीना औढ़े, हाथों में ग्लेडियोलाई के फूलों का बड़ा-सा गुच्छा लिए दरवाज़े पर खड़ी रही वह, बिना कोई आहट किए, सोए हुए सिद्धार्थ को देखने के लोभ से। वह कई बार पारस को भी ऐसे ही निहारती रहती है। पारस इस समय क्या रहा होगा भला। उसने घड़ी देखी। अरे नहीं, अभी तो वह उठा ही न होगा। मालूम नहीं अमित उसे ठीक से अटैन्ड भी कर पाता होगा या नहीं। जाने कैसे आहट हुई और जग गया सिद्धार्थ। 'गुड मार्निंग' इरा ने मुस्कुराहट बिखेर थी। आंख खोलते ही सामने इरा होगी—गुलाबी लिबास में चंपई रंगत लिए बालों में बारीक कोहरे के झिलमिल मोती पिरोए—आशातीत ही तो था। ठंड से हल्के नीले पड़े उसके होंठ, भीगी-भीगी सी देह, ऐसी ताज़गी की तस्वीर पहले कब देखी थी सिद्धार्थ ने। उसने उसे हाथ के इशारे से रोक कर कहा—"वहीं रुकी रहो इरा, मुझे कैमरे तक पहुंचने दो।" सिद्धार्थ ने उसके फ्रंट और प्रोफाईल लिए थे। इरा ने फूल कांच के गिलास में जमा दिए थे। किचन में चाय का पानी चढ़ा आई थी वह। पल भर में कमरा चाय की महक से भर गया था। हमेशा बढ़िया चाय पीता था सिद्धार्थ। चाय उसके हाथ में थमाते हुए इरा ने पूछा—"तुम अकेलेपन से ऊबते

नहीं ?" उत्तर में एक लम्बा मौन—उत्तर न देने का बहाने सा पर इरा है कि कुरेदने पर तुली है। बौखला जाता है वह "क्यों नहीं ऊबता। मैं क्या कोई अलग जाति का प्राणी हूं ?"

"यदि ऐसा है तो क्यों नहीं बना लेते स्थायी संबंध ? क्यूं नहीं ढूंढ लेते कोई अच्छी-सी जीवन साथी ? अब तो तुम्हारे बालों में एक आध चांदी की लहरें सहज ही दिख जाती हैं।" उसने हंसते हुए कहा था। सिद्धार्थ अभी भी गम्भीर था।

"पल-पल कम होती जा रही उमर से नावाकिफ नहीं हूं, पर अनिश्चय की स्थिति में ऐसा कुछ भी करना नहीं चाहता मैं।......और फिर अच्छा-सा जीवन साथी क्या ढूंढा जा सकता है ? उसका मिलना तो महज़ इत्तफाक होता है।"

अब गम्भीर होने की बारी इरा की थी। ढेरों प्रश्न मन को मथते रहे पर उनके अनुरूप शब्द न जुटा पाने की, या उन को अपनी सूक्ष्मतम भावनाओं सहित सम्प्रेषित न कर पाने की स्थिति को देखते हुए खामोश रही वह।

थोड़े अन्तराल के बाद सिद्धार्थ ने ही पूछा—"तुम क्या कल जा रही हो।"

"हां, पर तुम चाहो तो रुक भी सकती हूं......पर मैं जानती हूं तुम ऐसा नहीं चाहोगे।" इरा ने कहा। "और अगर चाहूं तो रुकोगी न, कल शाम तक एक चित्र पूरा करने का इरादा है, तुम पास होगी तो सुविधा रहेगी।"

पल भर को इरा को सिद्धार्थ का स्वार्थ अच्छा न लगा। यह सोच कर कि एक दिन और उसके सान्निध्य में गुजरेगा, इस परिपूर्ण माहौल में जीने को मिलेगा, वह रुक ही गई।

दूसरे दिन, दिन भर पेंट करता रहा वह और उसके पास ही बनी रही इरा, उसकी ज़रूरतों को पूरा करती हुई, उसे ड्रिंक बना-बनाकर देती रही। एक अद्‌भुत आनन्द का अनुभूत करती रही। बीच-बीच में सिद्धार्थ थोड़े ऊंचे स्वर में गुनगुनाता रहा, वही पुरानी गज़ल।

गए दिनों का सुराग लेकर, किधर से आया किधर गया वो,
अजीब मानूस अजनबी था, हमें तो हैरान कर गया वो।

बीच-बीच में उसकी आवाज़ डूब सी जाती और फिर ऊपर उठती। लगता समय दूर पीछे चला गया हो जैसे—और वह उसी प्रकार हंसते खेलते, तेज तर्रार बहसें करते, भुने भुट्टे खाते, पानी पूरी का आनन्द लेते थियेटर से लौट रहे हों या यूथ फेस्टीवल की तैयारी पर चर्चा कर रहे हों। इस बीच एकाध बार सिद्धार्थ ने उसे देखा था, पर डिस्टर्ब न किया था।

"एक बात पूछूं सिद्धार्थ ?"

'हां पूछो', उसने धीरे से कहा।

"तुम मुझ से प्रेम करते थे ?" इस प्रश्न के लिये तैयार न था सिद्धार्थ। सो हैरान सा पीछे देखने लगा। "हां तो, आई डिड केयर फार यू मैं (तुम से प्यार करता था)।"

"फिर क्यों जाने दिया मुझे अमित की ओर ? क्यों नहीं छीन लिया बढ़ कर, उससे मुझ को।"

सिद्धार्थ के हाथ से ब्रश छूट गया। वह धम्म से सोफे पर बैठ गया। उसके हाव-भाव से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता था कि वह गुस्से में है हालांकि वह अपने को सहेजते रहने में काफी माहिर है।

"क्या कहा तुमने—क्यों नहीं छीन लिया तुम्हें मैंने ? तुम क्या कोई जिन्स थीं ? कोई जागीर थी ? या मैं ही कोई मध्य-युगीन सामंत था ? एब्सर्ड, एकदम एब्सर्ड—यह ख्याल तुम्हें कैसे आया। यू रेटिड मी सो लोऽ, इतना गिरा हुआ समझा तुमने मुझे। तुम्हें तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध अपने जीवन में शामिल कर लूं।" वह उत्तेजित था। इरा ने मौन रह कर सुना था सब। थोड़ा रुक कर बोला था..."और तुम, तुम भी चाहती थी मुझे, शायद अब भी चाहती हो, तुम्हारा यहां आना ही प्रमाणित करना है, पर उस समय तुम अमित के आकर्षण से भी अछूती न थीं। उसके पास वढ़िया कैरियर जो था। मेरे पास तो जो भी था अनिश्चित ही था। तुम्हें चुनाव की स्थिति में पाकर ही यह छूट दे दी थी कि तुम वही करो जो अपने हित में ठीक समझो, क्योंकि तुम अपने आप को मुझ से बेहतर जानती थीं। स्वयं मुझे भी तुम्हारी ओर से आश्वस्त होने की कोई सूरत नज़र नहीं आती थी। उस समय भी मैं रिसीविंग एंड पर था, और शायद आज भी स्थिति वैसी ही है।" वहां से हट गया था वह और सहेज़ने लगा था रंग ब्रश आदि। अब उस से और न हो सकेगा कहना सुनना। इरा सोचने लगी सच्च रिसीविंग एंड पर ही तो रहा वह। कैसी तो पिघल गई वह उसे इस तरह बिखरते देख कर। उसके निकट आकर कहा, "सिद्धार्थ मुझे क्षमा कर सकोगे, कभी भी पल भर के लिए ही मुझे माफ कर सको तो उपकार मानूंगी। मैंने तुम्हें बहुत तकलीफ दी है यहां आकर।" उस की सांसों को अपने सीने पर महसूस कर रहो था वह, अपने भीतर उठता हुआ धुआं भी देख रहा था वह। उसने इरा को वापिस सोफे पर बैठा दिया और स्वयं बाहिर बालकनी में खड़ा रहा जब तक कि सहज न हो गया। वापिस कमरे में आया तो इरा वैसी की वैसी बैठी थी। उस की आंखें खासी सुर्ख थीं। उसे लगा वह तब से रो रही थी। "चलो हाथ मुंह धोकर तैयार हो जाओ, थोड़ा घूमेंगे।" उसने उसके पास आकर कहा। उस ने जैसे सुना ही न हो। बोली—"मैं तो अनजान थी सिद्धार्थ, पर तुम तो समझा सकते थे मुझे। क्या यह मेरे हित में न होता ? यों दूर खड़े तमाशाई बने रहे ?

"शायद ठीक कह रही हो तुम। मैं तुम्हें समझा सकता था, हम दोनों के हित में होता यह, पर उस समय की तुम्हारी मनःस्थिति भिन्न थी। तुम अगर इसे महज़ स्वार्थ समझ कर नकार देती तो...तो शायद सह न पाता मैं। अपने आप को तुम समझती ही हो। उस समय तुम्हें अमित के व्यक्तित्व की गरिमा के सम्मोहन से बाहर लाना कठिन था। कम से कम मुझ जैसे के लिए तो असम्भव।...अब यह सब फिज़ूल है, इसका ज़िक्र भी मत करो, जो मिला है उसे भोगो, सहेज लो, वैसे भी पूरा परिपूर्ण जीवन किसी-किसी के भाग्य में ही होता है। और एक बात और जोड़ना चाहूंगा, प्लीज़ मुझे गलत मत समझना—इस तरह मुझे फिर कभी कठिन परीक्षा में मत डालना। हाड़-मांस का इन्सान ही तो हूं...होप यू अन्डरस्टैंड मी।" उसने इरा का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा। "समझती हूं सिद्धार्थ समझती हूं सब। सच पूछो तो तुम पर मान करने का मन हो रहा है। कितने सही होते

हो तुम हमेशा और कितने मैच्योर भी ।" उस की आंखें एक बार फिर भीग गईं । सिद्धार्थ को कुछ-कुछ गिल्टी लगने लगा । उसने उसे सहज करने के लिये कहा—"वह क्या शे'र है 'दिल अभी पूरी तरह टूटा नहीं, दोस्तों की मेहरबानी चाहिये ।' अब तुम यह तो पूछोगी नहीं कि उन दोस्तों की फ़ैहरिस्त में तुम्हारा नम्बर कौन-सा है ।" सच ! हंस दी थी इरा ।

सुबह जाने की तैयारी थी । वह उसे जम्मू तक छोड़ आने की ज़िद कर रहा था, पर इरा को लग रहा था कि एक ही दिन जाने और आने में बहुत थक जाएगा वह । बहुत कोशिश के बाद उसने उसे कुद से ही विदा करने को राज़ी किया । इसके एवज़ उसने यह अवश्य चाहा कि रात देर तक वह बातें करते रहेंगे, सिद्धार्थ ब्रश नहीं छुएगा । कोई भी ऐसी बात न होगी जो किसी पुराने प्रसंग से जुड़ती हो । बस बातें होंगी, महज़ बातें किसी भी पूर्वाग्रह के बग़ैर । और फिर इरा लन्दन के अपने घर के विषय में बताती रही पारस का ज़िक्र बार-बार आया । सिद्धार्थ अपनी प्रदर्शनियों के बारे में बताता रहा, संगीत की चर्चा होती रही, पत्नीटॉप के सौंदर्य का बारीक से बारीक वर्णन होता रहा । बस अमित का ज़िक्र ही कम हुआ और अगर हुआ भी तो सिद्धार्थ की ओर से ही । इरा ने अपनी ओर से उसका ज़िक्र बिल्कुल भी न किया, शायद सिद्धार्थ हर्ट न हो इसलिए ।

सुबह भरपूर चमकीला दिन था । इरा कैमरा लेकर अलग कोणों से सिद्धार्थ के चित्र ले रही थी । उसने उसकी पेन्टिंगज़ को भी कैमरे में बन्द कर लिया था । सिद्धार्थ उसके लिए चिकन रोस्ट कर रहा था, उसने उसके लिए इरा के मना करने पर भी ढेरों सैन्डविच बनाए थे और भुने भुट्टे भी साथ रखे थे ।

इरा ने उसके कमरे में ताज़ा ग्लैडियोलाई सजा दिए थे और उसके बैड पर अपनी मनपसन्द खुशबू छिड़क दी थी ।

कुद्द में विदा लेते उसने पूछा—"दिल्ली कब तक आ रहे हो ।"

"अभी कुछ और रुकूंगा यहां । कुछ दिन मानतलाई में गुजारूंगा यहां । कुछ और काम करना चाहता हूं । दो माह बाद एक एकल प्रदर्शनी का आयोजन है, इसलिए यहां से कुछ विशेष लेकर जाना चाहता हूं ।"

इरा आश्वस्त हुई थी कि सिद्धार्थ का वहां रुके रहना उससे सायास दूर रहना न था—"मैं समझी कि मेरे दिल्ली होने तक तुम वहां न आना चाहोगे ।"

"फिज़ूल सोचती हो तुम । तुम्हारा आना बहुत सुखद रहा है । बहुत कुछ जो भीतर बन्द था, वह निकला है, और सच पूछो तो अपने को मजबूत पाकर बड़ा अच्छा लगा है । तुम्हारी ओर से भी ऐसा ही कह सकता हूं । दूसरी ओर इतने निकट सान्निध्य की आशा भी नहीं थी अब । मैं तो जाने कैसा तृप्त-सा अनुभव कर रहा हूं । कृतज्ञ हूं तुम्हारा... ।"

"धन्यवाद, बहुत-बहुत धन्यवाद । यदि ऐसा सोचते हो सिद्धार्थ, तो मैं बिना किसी काम्लैक्स के जा रही हूं । वरना मैं तो अपने को दोष दे रही थी कि तुम्हें दुःखी किया । नो रिग्रेट्स नाऊ (कोई पछतावा नहीं)" और उसने अपना सर उसके कन्धे पर धर दिया । वह उसे धीरे-धीरे सहलाता रहा ।

"सुनो सिद्धार्थ अगर यहां न आती तो कितने बड़े सुख से वंचित रहती। बहुत कुछ लेकर जा रही हूं यहां से। तुम्हारे यह आत्मीय स्पर्श, तुम्हारी यह परिपक्व जीवन दृष्टि, मुझे अवश्य ही एक स्थायित्व दे पाएगी। तुमने भीतर के शून्य को भर दिया है। सिद्धार्थ तुम मेरे कौन हो जो स्वयं अपने हित से बाहर जा कर भी मेरा हित चाहते हो...क्या यह सम्बन्ध भाषातीत नहीं ?...कर पाओगे इसे परिभाषित...।" वह अपलक उसे देखता रहा था और फिर हंस दिया था, "बहुत सुन्दर लग रही हो, ठहरो एक आखिरी तस्वीर ले लूं तुम्हारी।"

"आई लव यू सिद्धार्थ, आई स्टिल लव यू।" उसने पिघलने जैसी स्थिति में कहा था।

"ओके...ओके, अब और भावुक नहीं होना है। वी ब्रेव" और उसने उसे हल्के से टैक्सी की ओर धकिया दिया था। दूर तक हाथ हिलाता रहा था वह। इरा देखती रही थी उसे जब तक कि एक बिन्दु भर न रह गया था वह। □

पुल पर

□ अमरेन्द्र मिश्र

आई० टी० ओ० पुल के रेलिंग के सहारे खड़ा होकर ट्रैफिक देखना मेरी पुरानी आदत है। पुरानी यानी चौदह वर्ष पुरानी...जब दिल्ली में बेकारी, मुफलिसी, संघर्ष, कष्ट पर मस्ती के दिन थे। "मन लागे मोरा यार फकीरी में" कबीर ने यह पंक्ति खूब सोच-समझ कर लिखी थी। फकीरी में जितनी मस्ती है उतनी वैभव के बीच नहीं। मुझे लगता है कि ऐश्वर्य, तड़क-भड़क और सुख-साधन सब कष्ट को ही जन्म देते हैं। एक आम आदमी को यह सब ललचाते तो हैं लेकिन जब भीतर समाते जाएं तो ये छलते हैं। जब मैं अपने उन अतीत के दिनों में अपने संघर्ष से थक जाता था तब इसी रेलिंग के सहारे नीचे की सड़क पर तेजी से भागते लम्बे-लम्बे ट्रैफिक को देखता था और तब ऐसा लगता था मानो यह ट्रैफिक मुझ में स्फूर्ति और गति भर रहा हो—कह रहा हो—ठीक है थोड़ा सुस्ता लो पर उसके बाद इसी तरह गतिवान बने रहो।

मैं अब भी जब कभी उधर जाता हूं तो बजाय सड़क सीधे पार करने के पुल से होकर उसे पार करता हूं और उस रेलिंग के सहारे ट्रैफिक को देखता अपने पुराने दिन याद करता हूं। मुझे लगता है कि ट्रैफिक अब बहुत ज्यादा हो गया है और उसकी गति में कमी आई है। बढ़ती हुई जनसंख्या ने वाहनों की संख्या में निरन्तर वृद्धि की है और इसने शहर को अधिक मशीनी बना दिया है। इसने आम आदमी की जिंदगी को बिलकुल बदल दिया है। वह इस तरह की एक ही परिवार में रहने वाले लोग सामूहिक इकाई न रह कर व्यक्तिवादी हो गए हैं। व्यक्ति 'स्वयं' में ही सिमट कर रह गया है। यह एक खतरनाक समय है आज के परिवेश में। दरअसल स्वस्थ समाज ही प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण में सहयोग कर सकता है और समाज कब तक स्वस्थ नहीं होगा जब तके व्यक्ति स्वस्थ नहीं होगा। व्यक्ति स्वस्थ हो इसके लिए जरूरी है कि वह संस्कारवान हो, वह ईमानदार हो, वह सहिष्णु हो वह दूसरों की भलाई के साथ-साथ उसके सुख-दुःख का भी उपभोक्ता बने। पर यही सब आज लुप्त हो रहे हैं। नैतिकता खत्म हो रही है, आपसी विश्वास टूट रहे हैं।

उस रेलिंग के सहारे खड़ा मैं यही सोच रहा था यानी पिछले चौदह वर्षों के दौरान बदलती दिल्ली को महसूस रहा था।

अचानक एक नौजवान सामने खड़ा हो गया। पूछा—"श्रीनाथ चौधरी आप ही हैं ?"

'जी हां। बिलकुल ठीक पहचाना। आप ?'

'मैं ? समझ लें आपका पाठक हूं। मैंने हाल ही में एक पत्रिका में छपी आप की फोटो देखी थी। बड़ी देर से आपको एकटक देखता रहा। फिर साहस बटोर कर पूछ बैठा...।'

मैं हंस पड़ा, 'इसमें साहस बटोरने की क्या बात...मान लें मैं श्रीनाथ चौधरी न होकर कोई दूसरा ही व्यक्ति हूं, तो क्या फर्क पड़ता है ?'

'फर्क तो पड़ता है...बस इतना-सा कि मैं फटकार सुन सकता हूं या पागल कहला सकता हूं।'

'बस इतनी सी बात पर ?'

'जी हां।'

मैं कुछ न बोला। सिर्फ उसकी ओर देखकर मुस्कराता रहा। वह ट्रैफिक को देख रहा था...नीचे सड़क पर। मुझे जिज्ञासा हो आई थी कि यह नौजवान मुझ में क्यों दिलचस्पी ले रहा है ? में चाहता था कि वह जल्दी बताए, क्या कहना चाहता है ?

'आप कुछ कहना चाहते थे ?'

वह जैसे नींद से जागा हो। 'देखिए नीचे सड़क पर कितनी कारें भागी जा रही हैं। सच पूछिए तो यहां से ट्रैफिक देखना मुझे गहरा सुकून देता है। सोचता हूं कार तो मेरे पास नहीं है पर ये कार वाले अभी भी मुझ से नीचे हैं ?'

'पर इससे क्या होता है ? हवाई जहाज में बैठे हुए लोगों को तो आप-हम छोटे जीव के समान दिखाई देते होंगे।'

संयोग से इसी समय एक जहाज़ गुज़र गया। उसने आकाश की ओर देखा, कहा 'ठीक कहते हैं आप। पर आपकी नज़र अगर और अधिक ऊपर जाए तो आपको मानना पड़ेगा कि आकाश अनन्त है। शायद वही ईश्वर है।'

यों मुझे कोई जल्दी नहीं थी। शाम का समय था और यहां न होता तो शहर के किसी कॉफी हाऊस में बैठता...अब जब कहीं बैठना ही है तो यहां खड़ा होने में क्या हर्ज है ? जबकि यह नवयुवक भी यहीं खड़ा है जिसने मेरी कहानियां पढ़ी हैं। मैं फिर वही सवाल उछालता हूं—'आपने किसी पत्रिका में मेरी फोटो देखी थी...आप बता रहे थे...।'

'हां ! मैं आपसे पूछना चाहता हूं कि आप अपनी कहानी 'आकाश' में आखिर कहना क्या चाहते हैं ? मुझे तो वह कहानी समझ में नहीं आई ? मेरा मतलब कहानी के उस बेरोज़गार नवयुवक से है। आपने उसे अपराध की दुनिया में क्यों धकेल दिया ? क्यों उसकी आत्महत्या कराई ?

मैं मुस्कराया—'उसके पास दूसरा कोई चारा न था। वह यही कर सकता था।'

'पर मैं तो वह नहीं कर रहा ? आप देखिए मैं आपके सामने स्वस्थ खड़ा हूं चुस्त-दुरुस्त। क्या आप भी मुझे आत्महत्या को प्रेरित करेंगे ?'

मैंने कहा –'पर कहानी का क्या ? वह तो कहानी है। क्या किसी कहानी में कोई नवयुवक आत्महत्या कर ले तो वास्तव में...।'

'हां, वही तो हुआ है'—उसकी मटमैली आंखों के सामने अन्धकार था। अपनी आंखों को मेरे चेहरे पर टिकाते हुए कह गया—'यही हुआ है...। मेरे पड़ोस में यही हुआ। शिवनाथ ने आत्महत्या की। उसने भी आप की कहानी को पढ़ा था। आपने आकाश कहानी में आत्महत्या करने की कई विधियों का खुलासा किया है...उस में जो विधि उसे पसंद आई उसे अपनाया और...।'

'अब चुप भी रहिए आप। क्या आप मुझे ब्लैकमेल करना चाहते हैं ? मैंने कहा न, कहानी आखिर कहानी है। उस को वास्तव से...।'

'जोड़ना पड़ता है मिस्टर चौधरी, जोड़ना पड़ता है। उसका असर पड़ता है।'

'मैं नहीं मानता।'

'अब भी नहीं ?'—वह मुस्कराया।

मैं अजीब पशोपेश में फंसा पड़ा था। मैं यहां से निकल जाना चाहता था। किन्तु वैसा कर पाना क्या आसान काम था ? पर इस नौजवान को क्या कहूं जिसने मुझे घेर रखा है ? इस से किस प्रकार निजात पाऊं ? किस प्रकार ?

अचानक एक युक्ति मेरे दिमाग में आई और मैं कह गया—'पर मेरी कहानी में आत्म-हत्या न करने की चेतावनी भी थी...आपको याद होगा...रश्मि ने आत्महत्या की धमकी दी थी अपने पिता रामनाथ जी को, कि अगर उसकी शादी शिवनाथ के साथ नहीं होगी तो वह आत्महत्या कर लेगी ? इस पर उसके पिता उसे आत्महत्या के विरुद्ध कितना समझाते हैं ? क्या वह आत्महत्या की विधियों में से किसी को चुनती है ? क्या वह आत्महत्या करती है ?'

'नहीं।'

'यही तो सवाल है। क्या पता उसने वह मार्ग चुना होता तो कोई दूसरी रश्मि ने आत्म-हत्या कर ली होती। हो सकता था ? पर यहां तो कहानी का नायक आत्महत्या करता है। नींद की गोलियां खाकर। कहानी की उन पंक्तियों को याद कीजिये...और शिवनाथ थक चुका है। उसे किसी पर अब विश्वास नहीं। न मां, न पिता, न भाई, न बहन, न दोस्त, न प्रेमिका रश्मि...कोई तो नहीं, कोई भी नहीं। शिवनाथ को सबने छला। उसकी बेकारी ने उसे कहीं का न रखा। शिवनाथ आत्महत्या की राह अपनाता है...उसे लगता है कि अब इस नश्वर जगत में उसका कोई नहीं...।'

उसके मुंह से अपनी ही कहानी 'आकाश' की इन पंक्तियों को सुनकर मुझे परम प्रसन्नता हुई। ये पंक्तियां उतनी ही महत्त्वपूर्ण लगीं जितनी स्कूल के दिनों में हम लोग

परीक्षा के प्रश्न-पत्रों में किसी लेखक या कवि की महत्त्वपूर्ण पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या करते थे। मैंने अपना पक्ष रखा।

'रश्मि ने शिवनाथ को धोखा दिया। पर पहला प्यार कोई लड़की नहीं भूलती। इसमें कोई शक नहीं कि रश्मि ने शिवनाथ को तन-मन से चाहा, प्यार किया और शादी करने का निर्णय लिया पर उस में इतना भी सब नहीं था कि वह उसके आने वाले अच्छे दिनों की प्रतीक्षा कर लेती...अब उसकी आत्महत्या से रश्मि के मन में यह कसक रह गई कि काश वह शिवनाथ के साथ ऐसा नहीं करती...काश वह उसके अच्छे दिनों का इन्तजार करती। क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि रश्मि जैसी लड़कियां भविष्य में अपने किसी प्रेमी के साथ 'वैसा कुछ' नही करेंगी जैसा कि उसने किया ?'

मुझे अपना तर्क वज़नी लगा। लगा कि वह सुनने के बाद यह नवयुवक सन्तुष्ट हो जायेगा और मैं अपनी बची-खुची शाम कॉफी हाऊस में बिता सकूंगा। पर इस के विपरीत उसने फिर प्रतिप्रश्न किया—'फिर आपने अपनी 'शिनाख्त' कहानी में वैसा क्यों नहीं किया ? हालांकि स्थितियां तो वहां भी वैसी ही थीं ?'

'एक ही घटना को बार-बार नहीं देखना चाहिये। इससे कहानी में एकरसता आती है'— मैं किसी विशेषज्ञ के समान कह गया।

वह क्षणिक चुप था। मानो कोई दूसरा सूत्र तलाश रहा हो। मैं प्रसन्न था, उसके पास पूछने को अब कुछ भी नहीं बचा था। पांच मिनट यों ही बीते। मैं फिर से नीचे सड़क का ट्रैफिक देखता रहा...। शहर अब रोशनी में नहा रहा था। सड़क पर गाड़ियां थीं और शोर-शराबे से लदी-फदी उनकी पूरी की पूरी फौज। हमारे सर के ऊपर से एक ट्रेन धड़-धड़ाती हुई निकल गई थी और मुझे अनुमान लगाते देर न लगी कि शताब्दी एक्सप्रेस जा रही है। रात के ठीक आठ बजे थे।

यों इतनी देर बेमतलब इस पुल पर खड़ा होना कोई बुद्धिमानी नहीं। पर यह जो नौजवान मेरे साथ आज की शाम का अजनबी मित्र है उसे छोड़ना अच्छा नहीं लगता। अन्त में मैंने उससे पूछा—'क्या मैं आप से विदा ले सकता हूं ?'

'मैंने आपको परेशान किया ?'

'नहीं, बिल्कुल नहीं'—कह कर मैं मुड़ने को हुआ कि वह शुरू हो गया—'आप कहां जाना चाहेंगे ?'

'कहीं भी...इस शहर में कहीं भी जाया जा सकता है...मेरा मतलब किसी कॉफी हाऊस में, किसी रेस्तरां में, किसी लाइब्रेरी में...।'

'क्या आप कभी खिचड़ीपुर गये हैं ?'

'खिचड़ीपुर' ?'

'हां, कभी जरूर जाइये। न हो तो मैं आपके साथ चलूंगा। मैं वहीं रहता हूं। कहानी यह है कि कोई मां कहीं से मजदूरी करके चावल खरीद लाई। उस का तीन वर्षीय बालक भूख के मारे छटपटाता बेहाल था। मां ने खिचड़ी बनायी और जब वह बन चुकी तो कोई

कुत्ता उसे जूठा कर गया। बच्चा भूख से तड़प कर मर गया।. संयोग से ऐसा हुआ कि उस दिन उस गांव में प्राय: सभी ने खिचड़ी ही बनाई थी और उसे खाकर कोई नहीं बचा। तब वहां गिने-चुने लोग ही रहते थे। बस पंडित ने नाम दे दिया—खिचड़ीपुर।'

'लेकिन अब ऐसा क्या है वहां जिस के लिये जाया जाये ?'

'भूख, अभाव, तंगहाली, दरिद्रता...।'

'लेकिन यह कहां नहीं है ? मेरा मतलब...'

'आपका मतलब यह तो सभी जगह है फिर खिचड़ीपुर का नाम भला मैं क्यों ले रहा हूं ?'

'हां ! हां !!' मैं तनिक आश्वस्त होता कह गया।

'वहां दूसरी चीजें हैं, जिन्हें देखकर आप आश्चर्य कर सकते है।'

'मसलन' ?'

'मसलन कहानियां और उपन्यास पढ़कर ठीक वैसा ही करना जैसा कि लेखक ने दिखाया। जैसे आप की कहानी और शिवनाथ की आत्महत्या...।'

मैं यह कहां फंस गया था ? यह नौजवान मुझे इस मोड़ पर ले आएगा, यह तो सोचा तक नहीं था। अचरज करने और अविश्वास प्रकट करने का यहां कोई अवसर न था। पर मैं परेशान तो इस बात को लेकर था कि लोग वैसा ही क्यों करते हैं जैसा कि पढ़ते हैं ? 'पर लोग ठीक काम भी तो करते होंगे ?'

'नहीं। अफसोस इसी को लेकर है। ठीक काम कोई नहीं करता। बुराई आदमी का सारा ध्यान पहले अपनी ओर खींच लेती है। उसके बाद आदमी अनैतिक कर्म करना सीख लेता है।'

'ओफ्फ ! क्या मुसीबत है ?' वह गुस्से से मेरी ओर देखता है।

'क्या मैं आपका नाम जान सकता हूं ?' मैंने यह सवाल बड़ी देर के बाद किया था। ठीक वैसे ही जैसे कोई चार घण्टे आपसे बात करे और तब जाकर आप पूछें, 'क्या आप चाय पिएंगे ?'

'कोई फायदा नही।' वह झटके से कह जाता है—'समझ लें मेरा नाम शिवनाथ है। इससे क्या फर्क पड़ता है ?'

'मैं जाना चाहूंगा'—मैंने अपना आखिरी अस्त्र फेंका।

'पर मेरा सवाल अधूरा है।'

'इस में मैं क्या कर सकता हूं ?'—समझाते हुए मैंने कहा—'हमारे समाज में अच्छाई-बुराई दोनों हैं। साहित्य में भी वही लिखा जाता है जैसा समाज में चलता है। अब यह व्यक्ति के विवेक के ऊपर निर्भर करता है कि वह किसे अपनाता है और किसे छोड़ता है।

व्यक्ति अगर गलत काम करता है तो उसके लिये पुलिस है, प्रशासन है, न्यायालय है। वहां से..'

'लेकिन सुधार तो इनसे भी नहीं आता।'

मैं बोर हो रहा था। उसे वह भलीभांति जानता था। पर मैं कर क्या सकता था ? मैंने कहा—"आपकी बातों का क्या जवाब दिया जाये ? आप ही बताइये ?'

वह खुलकर हंसा मानो उसने फतह हासिल कर ली हो। पर मैं बेहद खामोश था। उस ने फिर सड़क के ट्रैफिक की ओर संकेत करके कहा—'जहां आप खड़े हैं, वहां से छलांग लगाकर नीचे गिर पड़े तो सैंकड़ों कारें आप को कुचलती चली जाएंगी। यह तो निश्चित है। कोई आपके लिये दो मिनट भी सोचने को बाध्य नहीं होगा। क्यों ? जानते हैं ? यही महा-नगर की नियति है। ठीक उसी प्रकार आपके साहित्य से तब तक कुछ नहीं होगा जब तक कि उस पर सही अमल न किया जाये। मेरा मतलब, किसी के पास सही-गलत का अन्तर करके लोगों तक पहुंचने का समय नहीं है। समाज को विकास के रास्ते ले चलने का काम इस व्यवस्था ने जिन लोगों को सौंप रखा है, वे सब एक बजबजाते गंदे नाले में इसे सड़ाने का काम कर रहे हैं। मैंने आपका अधिक समय ले लिया, क्षमा प्रार्थी हूं, गुडबॉय, फिर मिलेंगे।' और वह सचमुच चलने को तैयार हो गया। वह जाने लगा तो जाने क्यों उससे मेरी मुलाकात अप्रत्याशित-सी लगी। जिस रेलिंग के सहारे मैंने अपना शरीर टिका रखा था, वह हिलती-सी जान पड़ने लगी और लगा कि मैं कहीं नीचे न लुढ़क जाऊं।

इस पुल के पार नीचे की ओर उतरने के लिये उसने ज्योंही सीढ़ियों पर पांव रखा, तीन पुलिस वालों ने उसे पकड़ लिया। पर उसने उनसे अपना पीछा छुड़ाते हुए फिर उधर ही दौड़ना शुरू किया जहां मैं खड़ा था, पर एक पुलिसकर्मी वहां तत्क्षण पहुंच गया। उसने पुल से छलांग लगा दी और सड़क पर चपाट गिरा...ट्रैफिक से लदी-फदी सड़क पर उसका शरीर खून में नहा गया था। मैंने सड़क से अपनी नजरें हटा लीं और पीछे मुड़ा तब तक एक पुलिस वाले ने मुझे बाकायदा पकड़ लिया। देखते-देखते मैं चार पुलिस वालों से घिर गया। उनमें से एक ने पूछा, 'यह आदमी आपको कहां मिला ? यह आपसे क्या बातें कर रहा था ? आप उसे कितना जानते थे...?

मैं कोई उत्तर नहीं दे पाया। मेरे पास कोई उत्तर था भी कहां ? पर मुझे कुछ न कुछ तो बताना ही था...। □

भाषांतर

उड़िया कहानी

दूत

□ आर्य यज्ञदत्त

मूल उड़िया से अनु० डॉ० अजीत प्रसाद महापात्र

क्या आसमान टूट पड़ा ! ओह ! कितना भयावह शोर ! रोशनदान से कबूतर ने गर्दन उठाकर देखा । दोनों ओर कंकड़-पत्थरों की वर्षा हो रही थी । रोशनी में चिलकती हुई तलवारें और चाकू । सब जैसे एक दूसरे पर झपटे पड़ रहे थे ।

तड़ाक ! अचानक एक पत्थर जोर से उसके रोशनदान से आ टकराया । शीशे के टुकड़े-टुकड़े बिखर गये । पर वह बाल-बाल बच गया । फिर लगातार कई विस्फोट हुए । भयंकर आवाज से जैसे उसके कान बहरे हो उठे । बारूद के धुएं से उसकी आंखें धुंधला गईं । अपने सारे जीवन में उस कबूतर ने ऐसी अनहोनी, रोमांचक घटनाएं नहीं देखी थीं ।

इतने में सायरन बजाती पुलिस की गाड़ी आ पहुंची और आग बुझाने लगी । चारों ओर धुआं ही धुआं छा गया । कबूतर की आंखों से अविरल आंसू बहने लगे ।

धुआं छंटते ही उसने देखा खून से लथपथ लोगों को पुलिस घसीट-घसीट कर वैन में भर रही थी ।

कबूतर-कबूतरी के लिए ऐसे दृश्य बिल्कुल नये थे । कबूतरी सिर से पैर तक कांप रही थी । पुलिस की गाड़ी की लाल बत्ती और सायरन से कबूतर की आंखें मिचमिचाने लगीं । वह जगह-जगह से उठती आग की लपटें देख रहा था ।

दमकल गाड़ियों की बजती घंटियां भयभीत शहर को और अधिक भयभीत कर रही थीं ।

सुबह हुई। चौक में शांति थी। पत्थर, टूटे शीशे, रक्त और राख के ढेरों के बीच पुलिस बंदूक लिये पहरा दे रही थी।

जिस बनिये की दुकान के बाहर वे दाना चुगा करते थे आज वहां राख के ढेर लगे थे। उस दिन शहर में सन्नाटा रहा। अगले दिन कबूतर के बच्चे भी उड़ कर वहां आ पहुंचे उनका मुंह कुम्हला गया था। कबूतर ने बच्चों की चोंच में चोंच डालकर उनकी बिल-बिलाती भूख जांची। और मुंह घुमा लिया। फिर कबूतरी आई तो वे दोनों निराश होकर टूटे हुए रोशनदान में चोंच मिला कर बैठ गये। किसी के गले से 'गुटर गूं-गुटर गूं...' नहीं फूटा।

कबूतरी ने कहा, चलो, गांव की ओर उड़ चलें। वहां कुछ तो आहार मिलेगा।"

बरसात के दिन थे। खेत में धान अभी पके नहीं थे। वे वहां से भी निराश लौटे और भूखे रहे।

भूख की आग में आखिर वे कितने दिन डैने बांध कर बैठते? उन्होंने सोचा, इस शहर में घर-घर जाएंगे। बोरों से, धान, चावल, उड़द, मूंग जो दिखाई देगा जैसे-तैसे चुग लेंगे। शायद भले लोग हमें ऐसा करते देखकर मुट्ठी भर और अनाज बिखेर दें।"

कबूतरी बोली, "पर वहां मांसाहारी, कुत्ते-बिल्लियों से बच कर रहना होगा।" कौन कब दबोच ले।" कबूतर ने कहा, "शहर में अधिकांश लोग मेहनत मजदूरी करते हैं उनके यहां, अनाज के बोरे कहां होंगे।" पर, छोड़ो, आओ, चलो मेरे साथ देखते हैं।

कबूतर ने पूर्व दिशा की ओर पंख फैलाये। कुछ दूर उड़ने के बाद वह एक सरकारी अनाज भंडार के पास उतर गया। वहां सैंकड़ों कबूतर बैठे चुग रहे थे।

कबूतरी ने दुखी होकर कहा, "अरे यहां भी तो कमीनों का इतना जमावड़ा है क्या करूं?"

कुछ दिनों से मज़दूर काम पर नहीं लगे थे। अनाज भण्डार से बाहर नहीं निकाला गया था। इसलिए दाने बिखरे होने का प्रश्न ही नहीं उठता था। जो कुछ गले-सड़े पड़े भी होंगे तो उन्हें कीड़े-मकोड़े चट कर गए थे।

तभी, कबूतरी की तबीयत बिगड़ गई। नन्हे कबूतरों ने कहा, "बापू, भूसी ही भूसी खाने से मां बीमार हो गई है। काश! अन्न का कण भी कहीं पड़ा मिल जाता।"

कबूतर दुकान के आगे बैठे सांड को जुगाली करते देख मन मसोस कर रह गया और आंखें बन्द कर विचारमग्न हो गया। उसे सब कुछ चेतनाहीन दिखाई पड़ रहा था। जीवन की गति को जैसे काठ मार गया हो।

कबूतरी ने सोचा शायद कबूतर आंखें बन्द किये नींद में झपकी ले रहा है। उसने बच्चों से कहा, "हमें छोड़ो, पर तुम तो कहीं चुगने जाओ...। तभी कबूतर जागा और उस का ध्यान एक साथ फुदकते कांव-कांव करते कई कौओं पर गया। आखिर वह भी उड़ कर उसी छत पर आ बैठा जहां कौओं की भीड़ थी। उसने देखा, डिप्टी कमिश्नर के दफ्तर के बरामदे में एक बहुत बड़ी पार्टी चल रही थी। बाहर कई वी० आई० पी० लोगों की गाड़ियां खड़ी थीं। ज़ोर-ज़ोर से कोई बहस चल रही थी।

कबूतर ने दूसरी ओर गर्दन घुमा कर देखा, बैठक स्थल पर बहुत सारी पेपर प्लेटें पड़ी थीं जिन पर पड़ी मिठाई और नमकीन के दानों पर कौए, कुत्ते झपट रहे थे।

कबूतर भी उम्मीद लिए वहां आ बैठा। पर कोई बात बनती न लगी। अचानक उसने देखा, अध्यक्ष की मेज़ के नीचे कुछ जूठन बिखरी पड़ी थी।

कबूतर सब कुछ भुलाकर अध्यक्ष की मेज़ पर आ बैठा अध्यक्ष महोदय ने हर्ष से पुलकित होकर उसे झट से अपने हाथों में पकड़ लिया। वे बहस की गर्मा-गर्मी भूल गए थे। पर भूख से व्याकुल कबूतर सारी शक्ति लगाकर, हाथों मे छूट उन दानों को पाने के लिए फड़फड़ा रहा था!

सहसा अध्यक्ष महोदय ऊंचे स्वर में बोले, "आप सब इस कबूतर को देख रहे हैं? आप बता सकते हैं। इसका घोंसला कहां है?"

किसी ने कहा, "यह मस्जिद के झरोखे में रहता है।"

"........हमने इसे मन्दिर में तुलसी के चौरे पर चुगते देखा है।"

"......यह गिरजे की बुर्जियों में छिपा बैठा रहता है।"

अध्यक्ष ने कहा..."यह केवल पक्षी है। 'शांति दूत।' किसी सम्प्रदाय का दूत नहीं। साथियो!

इससे मत पूछो इसके घोंसले का पता,

आयत से मत पूछो आयतन,

सूक्त से मत पूछो उसकी सीमा

सर्मन से मत पूछो उसकी

परिसीमा।

बस......अपने से पूछो......" और उन्होंने हाथ खोल दिये...।

कबूतर था और दाने थे।

बस, अब......। □

संवाद

स्वीडिश कवि टोमॉस ट्रांसट्रोमर से पंकज शुक्ल की बातचीत

वर्ष 1937 में जन्मे श्री टोमॉस ट्रॉसट्रोमर पेशे से मनोवैज्ञानिक और समकालीन स्वीडिश क... के अत्यन्त प्रतिभाशाली कवि हैं। 1954 से 1987 के बीच श्री ट्रॉसट्रोमर के कई काव्य-संग्रह ...काशित हो चुके हैं। साहित्य जगत के दो प्रतिष्ठित सम्मान "पेट्राक-पुरस्कार" (1981) और बॉनियर पोयट्री पुरस्कार से अलंकृत हो चुके हैं। इस सिलसिले में वे विश्व के अनेक देशों की यात्रा कर चुके हैं। भारत-भ्रमण के दौरान वे भोपाल आए।

इधर भोपाल में उनसे मिलना हुआ, उनसे समालाप के कुछ अंश : —

एक कुशल मनोवैज्ञानिक और एक कुशल प्यानो वादक श्री ट्रांसट्रोमर का कविता को लेकर मानना है कि "जब अन्तर्जगत व बाह्य जगत का मिलन होता है तो सत्य स्वतः ही जग उठता है। वस्तुतः अनुभूत सत्य की अभिव्यक्ति ही कविता है।

"टल जाता है कैसा भी अवसाद
ढीला कर देती हैं पीड़ा पाश कभी भी अपना
रूक जाता है गिद्ध अचानक उड़ते-उड़ते।"

श्री ट्रांसट्रोमर कवि को रिक्त नहीं उन्मुक्त मानते हैं :

"आसमान है साफ और नीला
दीवार से पीठ टिकाए फुसफुसाता है—
करता ज्यों प्रार्थना शून्य से
और शून्य मुख मोड़ हमारी ओर
बुदबुदाता है
मैं खाली हूं नहीं

खुला हूं

बस इतना ही"

ट्रांसट्रोमर ने अपनी कविताओं में कल्पना और यथार्थ का ऐसा समन्वय प्रस्तुत किया हैं जिससे समकालीन सच्चाईयां उजागर होती हैं। साथ ही एक रहस्य की छाया से जुड़ी, उनकी कविताओं में शहरी जीवन की विसंगतियां कलात्मकता से उभर कर सामने आती है। श्री ट्राँसट्रोमर अपनी "गद्य-कविताओं" के लिये भी चर्चित हैं। लेकिन वह मुस्कराते हुए कहते हैं—"पद्य कविता टहलने के समान है, जबकि गद्य में दौड़ लगाई जाती है।"

उनका कहना है कि—"गद्य में जो कहा जा सकता है, उससे जो बचा रहता है, वह कविता में ही व्यक्त हो सकता है। विदेशी-भाषा में आप अच्छा गद्य लिख सकते हैं, अच्छी कविता नहीं। कविता, इस अर्थ में, गद्य से भिन्न ही नहीं सूक्ष्म भी है।"

कविता को किसी सहजता की जरूरत नहीं होती। जैसे सच्चाई को नहीं होती। लेकिन अधिकांश तथाकथित कविता, इस अतिरिक्त सहजता से भरी रहती है।

मनोविज्ञान को अपनी रुचि का विषय बताते हुए वह आगे कहते हैं कि विचारों को साकार करने में समय लगता है। मैं सामाजिक-समस्याओं को चुनता हूं। और उन पर अपने विचार कविता में अभिव्यक्त करता हूं।

मनोवैज्ञानिक होने के नाते, श्री ट्रांसट्रोमर को समाज के विभिन्न वर्गों से जुड़ने का मौका मिला और वे मानते हैं कि इस बहाने उन्हें कविता मिली है। कवि होने के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक होने के नाते वे स्वीडिश समाज और उसकी समस्याओं से भी जुड़े हुए हैं।

—भारतीय साहित्य से आपका कितना और कैसा संपर्क रहा है, अब तक ?

मैं जो कुछ पढ़ता हूं, उससे मुझे प्रेरणा मिलती है। अरूण कोल्हटकर और कृष्ण बल्देव वैद की कहानियां पढ़ी हैं। स्वीडन में, टैगोर भी बहुत प्रसिद्ध हैं, जिन्होंने अपना एक विश्वविद्यालय स्थापित किया।

मैंने भारत का, प्राच्य धर्म "उपनिषद्" पढ़ा है।

—आप मूलत: मनोवैज्ञानिक हैं और हृदय से कवि। तो क्या आपकी कविताओं पर मनोविज्ञान का कोई प्रभाव है ?

मैं समझता हूं कि कविता पर, मनोविज्ञान का प्रभाव पड़ता है। कविता कर्म ऐसा है जिसमें विभिन्न प्रकार के विचार होते हैं, अलग-अलग विचारों का सम्बन्ध अलग-अलग विषयों से होता हैं। कोई विचार समाज शास्त्र से सम्बन्ध रखता है तो कोई भूगर्भ से। विचार तो अदृश्य होता है और कविता विविध विषयी, विविधवर्णी होती है।

—यानी आपके मनोवैज्ञानिक-अध्ययन से आपके काव्य-सृजन को संबल मिलता है ?

"मेरा विचार है कि मनोवैज्ञानिक-अध्ययन कविता को पुष्ट करता है। कविता सृजन में

मैं ऐसे विषय चुनना चाहता था, जो साहित्यिक, अकादमिक न हों। और साथ ही, साथ उन विषयों में टेबुलेशन, गणित, आंकड़ों का झंझट न हो। कविता, विद्यमान-परिस्थितियों के विषयों पर निर्भर करती है।

विचारों को, साकार रूप देने में, समय तो लगता है फिर भी वह मेरी रुचि का विषय है। मैं सामाजिक समस्याओं को चुनता हूं और उन पर अपने विचार कविता में, अभिव्यक्त करता हूं। किन्तु इस सब के लिए, बहुत समय की आवश्यकता होती है। ताकि सभी तरह के विचारों को संजोया, जोड़ा जा सके।''

---दुनिया के अनेक हिस्सों में आज भी शोषण और अन्याय जारी है। आप कवि और कविता की क्या जिम्मेदारी मानते हैं ?

कवि की जिम्मेदारी है कि, समस्याओं का चित्रण, कविता में करे। कवि, भी तो एक नागरिक होता है। राजनैतिक-व्यक्ति के समान, उसे आचरण नहीं करना है। किन्तु संकट की समस्याओं में, देशकाल के रूप का चित्रण करना, उसकी जिम्मेदारी है।

—स्वीडन में आजकल कविता की क्या प्रवृत्तियां हैं ?

स्वीडन में, कविता की प्रवृत्ति के लिये, कोई निश्चित परम्परा नहीं है। प्रवृत्ति तो व्यक्तिवादी है। कवि, अपनी रुचि के अनुसार अपने विचारों की अभिव्यक्ति करते हैं। मैं तो उस केन्द्रीय थीम को, स्पष्टतया वर्णित करने में विश्वास करता हूं जिस पर मेरा ध्यान केन्द्रित है। दूसरे भी कर रहे हैं।

—''भोपाल में, आप कुख्यात गैस-त्रासदी से अवगत हुए। अब आप इस सम्बन्ध में क्या अनुभव कर रहे हैं ?''

''भोपाल गैस-त्रासदी बड़ी भयावह घटना हुई है। स्वीडन में, छोटी-मोटी दुर्घटनाएं पर्यावरण, प्रदूषण और जहरीले रसायनों से होती हैं। पर भीषण-दुर्घटना नहीं हुई।

लेकिन भोपाल-गैस-त्रासदी को संयुक्त-राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति को गम्भीरता से लेना चाहिए।

औद्योगिक-तकनालॉजी ने मानव जाति पर ऐसी विपदाएं ढा दी हैं। इस औद्योगिक तकनालॉजी का लक्ष्य, झटपट और अधिक से अधिक लाभ, आसान तरीके से प्राप्त करने का होता है। किन्तु समाज को ऐसे भयंकर खतरे उठाने पड़ते हैं।

—अपनी कोई प्रिय कविता या कविता की कुछ पंक्तियां सुनाना चाहेंगे ?

मेरी कोई प्रिय कविता नहीं है। बस, मैं तो अपने श्रोताओं पर छोड़ता हूं कि वे ही चुनाव करें। मैंने तो रचना की है, मुझे तो मेरी सभी कविताएं प्रिय हैं।

—आपकी कविता के प्रति, आपकी पत्नी की क्या प्रतिक्रिया रहती है ?

वे मेरी अच्छी साथी हैं। यकीनन वे भी, मेरी कविता-रचना में रुचि रखती हैं। वे मेरे प्रत्येक विचार और अनुभव में सहभागिनी होती हैं। पहली मर्तबा भारत आई हैं। और यहां से लौट कर घर में, अपने भारत संबंधी अनुभव सुनाएंगी।

काव्य-पाठ के सिलसिले में आपने किन देशों की यात्रा की है ?

ज्यादातर अमरीका गया हूं। मेरी कविताओं का अंग्रेजी में भी अनुवाद हुआ है। वहां उसे लोगों ने, काफी पसन्द किया है। कई बार तो भारी संख्या में, लोग आकर्षित हुए हैं।

—वहां आपकी कविता के प्रति लोगों की मुख्य-प्रतिक्रिया क्या रही ?

मुख्य प्रतिक्रिया तो स्पष्ट रूप से नहीं बताई जा सकती। लेकिन व्यक्तिगत प्रतिक्रिया तो संकारात्मक कही जा सकती क्योंकि जिन व्यक्तियों ने मुझ से सम्पर्क किया, उन्होंने मेरी कविताओं की प्रशंसा की।

—कविता और समाज में रिश्ते को लेकर आपकी क्या राय है ?

यही कहना चाहता हूं कि कविता के द्वारा, हमें समाज को कुछ देना चाहिए। जिस कविता से, समाज को कुछ नहीं मिलता, वह प्रयत्न बेकार है।

—"क्या आपको मालूम है कि स्वीडन के प्रति भारतीयों का एक खास तरह का 'ग्लेमर' है ?

(मुस्कराते हुए) "हम कई प्रकार के हथियारों की आपूर्ति करते हैं। विशेषज्ञ रहे हैं। स्केण्डल भी हुए हैं।

किन्तु मैं आशा करता हूं कि हथियारों की बात छोड़कर भारत और स्वीडन के बीच साहित्यिक विचार-विनिमय होगा। मैं चाहता हूं, भारतीय इस सिलसिले में स्वीडन आएं। स्वागत है।" □

स्वीडिश कविता

कांच घर

टोमॉस ट्रांसट्रोमर

□ अंग्रेज़ी से अनु० रमेशचन्द्र शाह

एक काले दिन के बाद बजाता हूं मैं हेडन का संगीत
और महसूस करता हूं थोड़ी गर्मी हथेलियों में
उत्सुक हैं परदे पियानो के, गिरती हैं कोमल हथौड़ियां
स्वर है ओजस्वी, स्निग्ध, आपूरित मौन से
स्वर में पुकार है स्वतन्त्रता की—"मैं हूं"
कोई है जो करदाता नहीं है सम्राट का।
झोंकता हूं हाथ अपने संगीत की जेबों में
अब मैं हूं पूरी तरह शांत और निरउद्विग्न।
गीत की ध्वजा है यह ऊपर उठी हुई : पढ़ लो संकेत यह :
"हम नहीं करते हैं आत्म-समर्पण। हम चाहते हैं शांति।
कांच का है घर संगीत, खड़ा है ढलान पर
उड़ रही हैं चट्टानें, लुढ़क रही हैं चट्टानें।
चट्टानें लुढ़कती हुई आर-पार हो जातीं हैं घर के
घर का हर शीशा मगर अभी तक साबुत है। □

किताबें

अब न बनेगी देह्री (उपन्यास)

लेखिका : पद्मा सचदेव

प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, जी० टी० रोड दिलशाद गार्डन, दिल्ली 110095

मूल्य : 45/- रुपये

सहज प्रेम का रंग लोक

□ डॉ० आदर्श

विधवा रेवती और महन्त गिरि बावा के प्रेम सम्बन्धों को केन्द्र में रख कर इस उपन्यास का ताना-बाना बुना गया है। युवती रेवती के साथ अन्याय हुआ है कि उसका विवाह जन्म से हृदय रोगी के साथ किया गया जो चन्द ही दिनों बाद चल बसता है। रेवती ससुराल में असुरक्षित है, अत: मन्दिर की शरण में आ पहुंचती है। मन्दिर पर सब को विश्वास है कि वहां भगवान का निवास है और उसके उपासकों में इतनी नैतिकता है कि वहां कोई भी वासना के कुचक्रों से दूर रह कर प्रभु चरणों में अशाँत मन को शांत कर सकता है। पर दिल का क्या भरोसा ? मन्दिर के महन्त गिरि बावा बहुत बचने व भागने पर भी मन्दिर में संगमरमरी मूर्ति से भी सुन्दर सद्य: स्नाता जो 'मूर्ति' अचानक देख चुके हैं, वह रेवती, उन्हें भुलाए नहीं भूलती और चिंगारी धुंआने लगती है। रेवती भी जी जान से उन्हें चाहती है और जानते-बूझते स्वयम् को उन्हें समर्पित कर देती है। क्रांतिकारिता इसमें इतनी है कि रेवती भयभीत नहीं है और गर्भ में खिल रहे फूल को वह जन्मना चाहती है—निडरता से। गिरि बावा ग्लानि ग्रस्त हैं। उन्हें लगता है कि उनसे जो कुछ हुआ है उससे मन्दिर के प्रति लोगों की भावनाओं को गहरी ठेस पहुंचेगी। उन्हें कोई मार्ग नहीं सूझता तो वह जीवित समाधि लेने चल पड़ते हैं। रेवती भी चल पड़ती है। किसी दूसरी जगह, जहां वह मनस् के संरक्षण में बच्चे को, अपने प्रेम के प्रतीक को यह दुनिया दिखा सके।

अभी पिछले दिनों स्व० कुमार गंधर्व से लिया गया इंटरव्यू पढ़ रहा था। उन्होंने कहा—'देखिए एक बढ़ई है। वह लकड़ी का परम्परागत काम करता आ रहा है। लकड़ी का उसे कोई ज्ञान नहीं है। लकड़ी का ज्ञान होने के बाद वह कुछ और ही होगा। उसकी चीज अलग दिखेगी। जब हमें राग दिखते हैं, अलग दिखते हैं। पहले यह समझ नहीं थी और गाते थे, वे राग अब अलग रूप से सामने आए, कोई उनमें परिवर्तन नहीं है। और मैं संगीत में इतना क्या परिवर्तन कर सकता हूं। मगर हिम्मत तो जरूर है। अकेला दरिया में क्या करे। मैं क्या कर सकता हूं अकेला, मगर कुछ न कुछ लहर तो पैदा कर सकता हूं।"

'पद्मा सचदेव' ऐसा नाम है, जिसे पढ़ते ही उपन्यास—सम्भवत: इस स्तर का किसी डोगरी लेखक की पहल---पाठक द्वारा खरीदा जा सकता है। कीमत भी वाजिब। इसी के साथ पाठक की यह उम्मीद भी बावस्ता होती है कि इस लेखिका की यह कृति कुछ और ही होगी, कुछ अलग दिखेगी। क्या यह अस्वाभाविक है कि पाठक यह आशा बांधे कि उपन्यास के क्षेत्र में कोई नई लहर इस लेखिका ने पैदा की होगी। हिन्दी में जहां लेखिकाओं का प्रश्न है वहां कृष्णा सोबती, उषा प्रियम्वदा, मंजुल, भगत, मन्नू भण्डारी, उषा सेठ, और ममता कालिया के लेखन से पाठक गुजर चुका है। प्रश्न उठता है आप वह क्या नया जोड़ने जा रहे हैं जो इस में अपनी अलग पहचान कराता दिखे ? जहां नारी शोषण, वेश्या-वृत्ति, कुण्ठित मनोविज्ञान, अमरीका में भारतीय मानसिकता, फ्री सैक्स, दफ्तरों में नारी स्थिति आदि अनेकों विषयों में उपन्यास आ चुके हैं, वहां आप क्या जमीन तोड़ रहे हैं ? क्या यही कि रेवती अपनी बुआ जैसी शहीद होकर 'देहरी' नहीं बनेगी, अपितु अपनी लड़ाई अपने बूते पर लड़ेगी। और बूता यह कि वह गांव ही छोड़ कर पलायन करती दिखती है। नायक भी पलायनवादी और नायिका भी।

समूची कहानी में पात्रों के साथ लेखकीय उपस्थिति इस उपन्यास की कमर तोड़ देती है। पद्मा जी को अपने पात्रों पर भरोसा नहीं है, इसलिए वे बीच-बीच में नारे देने आ पहुंचती हैं—'वाह रे भारतवर्ष, जहां स्त्री जिन्दा रहने पर विधवा और मरने पर सुहागिन हो जाती है।' या—'स्त्री को स्त्री विधवा बनाने में जुटी हुई थी।'

सारा उपन्यास पढ़ते बड़ा ही विचित्र अनुभव यह होता है कि नारी की दयनीय स्थिति को सहज स्वीकार कर लिया गया है, उसके प्रति विद्रोह या पड़ताल गायब है। ठीक यही स्थिति मन्दिर और वहां के ढोंगी वातावरण के प्रति भी है। कोई पात्र ऐसा जीवन्त नहीं जो यह सोच सके या आवाज उठाता दिखे कि मन्दिर से बंध कर समूचे गांव का जीवन ठहर क्यों गया है ? भांग घुंट रही है या मलाई उड़ाई जा रही है, सभी गिरि बाबा जैसे निर्लेप बने बैठे हैं ?

जम्मू छोड़ दिल्ली बैठे एक अरसा बीत गया है पद्मा जी को। स्वाभाविक है अपने वतन के प्रति मोहग्रस्त एक नास्टेल्जिया उनके उपन्यास में घर करता चला गया है। गरीबी और अभावों से उन का सीधा सरोकार नहीं रह गया है। जब जम्मू छोड़ा होगा तब ही शायद लेकिन अब जम्मू प्रांत के घर-घर में बादाम, अखरोट और यहां तक कि दंदासा भी नहीं दिखाई देता। यह आज का यथार्थ है। इस कंडी इलाके की कंटीली वास्तविकताओं को पाठक इस उपन्यास में खोजता-खोजता थक हार जाता है। सारे उपन्यास का मौसम गर्म है, जबकि विषैली सुइयों से बेंधती बर्फीली हवा यहां का दूसरा महत्त्वपूर्ण यथार्थ है। गांव वाले

आग तापते, ठिठुरते, बिन स्वैटर कोट के कैसे सर्दी झेलते हैं इसे दिल्ली से नहीं, दिलों से रिश्ता बना कर, उनके बीच रह-जी कर पन्नों पर उतारा जा सकता है।

रेवती का प्रेम के सम्बन्ध में साफ दृष्टिकोण है। वह अपने मूलभूत अधिकारों के प्रति सजग है और संघर्ष के लिए प्रस्तुत भी। यह जरूरी नहीं कि किताबें पढ़ कर ही आदमी गुनी बने। जिन्दगी की किताब पढ़ने वाला बाज वक्त ज्यादा गुनी हो निकलता है। पर सत्तरह साला अनपढ़ रेवती परिवेश से इतना आगे, इतनी साफ-सुथरी सोच रखने वाली मानसिकता तक कैसे आन पहुंची—समझ नहीं पाता पाठक। लेखिका अपनी विचारधारा उस पर लादना चाहती है कि वह वर्तमान शहरी नारेबाजी जागरूकता से लैस दिखाई देती है। रेवती का जो परिवेश व इतिहास उपन्यास में उभरता है उस में यह आधुनिकता वाला फ्रेम फिट नहीं बैठता और सब नकली, उधारी तथा नारेबाजी से ग्रस्त दिखाई देता है।

रेवती एक किशोरी नहीं, एक प्रौढ़ा लगती है जो अनजाने कुछ भी नहीं करती। वह एक परिपक्व सोच की स्त्री है जो समझ-बूझ महन्त गिरि बावा से प्रेम करती है, उन्हें लुभाती है, उन का द्वन्द्व महसूसती है इसलिए बार-बार मण्डराती है और अन्त में उन्हें पा कर ही सन्तोष लेती है। रेवती का यह स्व कथन कि—'एक सपने, एक मृग मरीचिका के पीछे भाग रही हूं, पर कितना सुख है इस भागमभाग में—आखिर हमें क्या इंगित करता है? जानबूझ कर मृगमरीचिका के पीछे की यह भागमभाग किशोरी रेवती की मानसिकता से मेल नहीं खाती। साफ समझ रहा है पाठक कि यह सुख रेवती का नहीं लेखिका का है।

इसी सन्दर्भ में एक और महत्त्वपूर्ण बिन्दु है जिस पर विचार आवश्यक है। नारी स्वतन्त्रता पर वर्तमान सोच उधारी है, यूरोपीय नारेबाजी निसन्देह आयातित है। इसका अर्थ यह नहीं कि वर्तमान नारी स्थिति ठीक है या सन्तोषजनक है या उसे बनाए रखना चाहिए। पर इसका यह अर्थ अवश्य है कि यथार्थ देखने की उधारी, आयातित दृष्टि नहीं अपितु मौलिक दृष्टि हो और समाधान भी वायवीय न होकर ठोस धरती से जुड़े हों। रेवती गर्भ धारण करके किस आर्थिक सम्बल के सहारे संघर्ष करने उतरी है? क्या उन चन्द गहनों के सहारे जो उसे ससुराल से वापिस मिले थे?

रेवती की यह क्रांति जहां से आयात हुई है उसी यूरोप के एक देश इंग्लैण्ड की ताजा मिसाल सामने है। प्रधानमंत्री जॉन मेजर के मन्त्रिमण्डल के एक मन्त्री हिम यो को मन्त्री-मण्डल से इस्तीफा देना पड़ा। उनके चुनाव क्षेत्र दक्षिण सफॉक की स्थानीय टोरी इकाइयों को लगा कि नहीं, यो ने जो कुछ किया है उसका सार्वजनिक-राजनैतिक परिणाम उन्हें भुगतना पड़ेगा। उन्होंने किया यह था कि विवाहित होने पर भी उनके गुप्त सम्बन्ध एक अन्य स्त्री कु० जूलिया स्टेट से हो गए और उससे एक बच्ची ने जन्म लिया। इस सारे घटनाक्रम पर प्रभाव जोशी के—3 जनवरी 1994 कागदकारे—सम्पादकीय की यह पंक्तियां दृष्टव्य है—

'इसे मानवीय कमजोरी या परम्परा विरोधी स्वैच्छिक कर्म के प्रति मानवीय रवैया बता कर इसकी सराहना भी की जा सकती है। लेकिन इससे समाज बनता नहीं और सभी व्यक्ति भुगतते हैं ऐसा निष्कर्ष इंग्लैंड के समाज ने निकाला है। बर्ट्रेंड रसेल ने लिखा है

कि स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध में समाज तभी आता है जब बच्चे होते हैं।...संसर्ग स्वैच्छिक किया तो स्वेच्छा के साथ संयम और विवेक भी दिया। विवेक के बिना स्वेच्छा को स्वच्छन्दता में परिवर्तित होने और मनुष्य को ध्वस्त होने से कोई रोक नहीं सकता। कानून या सामाजिक नियमन से यह सध नहीं सकता इसलिए सभी समाजों ने वर्जनाओं और वंचनाओं को अपने व्यक्ति के मानस का आंतरिक तत्त्व बना दिया। अति के कारण इन वर्जनाओं और वंचनाओं में मनुष्य अपने को बंदी महसूस करने लगा। उन से विद्रोह के कारण परमिसिव सोसाइटी विकसित हुई जिससे वापस लौटने का अभियान—बैक टू बेसिक्स—इंग्लैण्ड में चलाया जा रहा है। घर परिवार के पारम्परिक मूल्यों की पुनर्स्थापना इसलिए जरूरी है कि परिवार टूट गए तो समाज बना नहीं रह सकता।'

पर तस्वीर का दूसरा पहलू भी है। जहां तक उपन्यास की भाषा की बात है उसमें प्रवाह के साथ-साथ पद्मा जी कवयित्री बराबर साथ बनी रही हैं। यथा—'रेवती के ससुराल की ड्योढी किसी मुर्दा व्यक्ति की आंख की तरह खुली हुई थी, या—'गिरि बाबा आकाश की ओर देख रहे थे। उन्होंने देखा चांद रेवती के घर की तरफ जा रहा था।'

दृश्य और पात्र की मानसिक स्थिति का सजीव चित्र बार-बार बांधता है—'गिरि बाबा ने ऐसा दृश्य कभी न देखा था। वह स्तब्ध हो गए। हाथ जहां का तहां रह गया। शरीर जड़ हो गया। अपनी ही सांस की आवाज़ उन्हें खटकने लगी। उन्हें ध्यान आया, मन्दिर में संगमरमर की कई मूर्तियां हैं, पर ऐसी मूर्ति तो कोई नहीं। वह टकटकी लगाए अचेत से खड़े थे।'

कम से कम शब्दों को खर्च करते हुए एक घटना को लेखिका ने इस तरह उकेरा है कि भाषा पर उनके अधिकार को मानना ही पड़ता है—'धड़ाम ऽ ऽ ऽ...।'

आवाज़ हुई तो बारूठ सीढ़ियों के ऊपर खिड़की की सलाख जोरों से पकड़े गिरि बाबा चौंके, यह कैसी आवाज। उन्होंने देखा, बावड़ी पर एक सफेद कपड़ा पड़ा है और रात की निस्तब्धता में साफ पानी में किसी के होने की आवाजें आ रही हैं। यह सब उन्होंने सीढ़ियां उतरते समय सोचा। पलक झपकते ही वह बावड़ी पर आकर रुके और फिर एक और "धड़ाम......!"

गांव में मन्दिर सभी गतिविधियों का केन्द्र होता है। आज भी यही स्थिति है। मामूली घटनाएं किस तरह चमत्कार में बदल जाती हैं—गांव की यह मानसिकता लेखिका की पड़ताली निगाहों से अनदेखी नहीं रही है—'पसार वाली ताई सोच कर बोली, "जब मुकद्दम पहुंचा, तो शिवजी का यही संगमरमरी चरण थामे गिरि बाबा उन से बातें कर रहे थे। आज तक हमने तो अपनी उम्र में नहीं सुना कि किसी महन्त को शिव के दर्शन हुए हैं।'

भाषा का प्रयोग पात्रानुकूल भी हुआ है। मन्दिर के वातावरण में साधुक्कड़ी भाषा का चटख प्रयोग है—

संकटमोचन ने घबरा कर कहा, 'महन्त जी किस सोच में डूबे हो? यह संसारी लोगों की दुनिया है। सुन्दर की बहू का विलाप है। वही सुन्दर जो आज गोलोक सिधार गए।'

प्रादेशिक भाषाओं के सम्पर्क में आते रह कर हिन्दी निरन्तर समृद्ध होती गई है। डोगरी शब्दों को लेखिका ने जस का तस रख कर हिन्दी को और अधिक समृद्ध तो किया ही है साथ ही डुग्गर देश की सोंधी गन्ध को प्रसारित किया है। बोल-चाल के आम शब्द हीरे से टंके लगते हैं—गुच्छ-मुच्छ, टूटी (स्टेथस्कोप), खराश, झारी, चुगलाना, बूट, डोगरी सुत्थन, रंगरेज, सोटी, भाऊ, ट्रंक, कारज, महत्तू, शरीके, पसार, और राक्शसनी।

कुछ भी हो, यह सच है कि उपन्यास एक बार उठा लेने पर छूटता नहीं है। पाठक भाषा और कथा प्रवाह में बहे चला जाता है। फ्लैप का यह दावा कि रेवती गिरि बाबा को रूहानी प्रेम करने लगती है—सही नहीं लगता। यह साफ-साफ मानसिक और दैहिक प्रेम है जो प्राकृतिक भी है और स्वाभाविक भी। यानि सहज प्रेम का रंग लोका रही बात रेवती के प्रण की—'कि लोक-लाज के भय से अब कोई देहरी नहीं बनेगी'—तो यह साफ है, देहरी चाहे न बने, 'लोकलाज' का भय तो बराबर रेवती की है ही। □

सन्दर्भ :—

1. कला विनोद—सम्पादक—अशोक वाजपेयी (प्र 8)
2. जनसत्ता—सम्पादक—प्रभाष जोशी (3 जनवरी 1994)

संकट दृश्य का नहीं (काव्य संग्रह)

लेखक : नरेन्द्र मोहन

प्रकाशक : नालंदा प्रकाशन;

महरौली नयी दिल्ली—110020

प्रथम संस्करण : 1993

मूल्य : 80/-

आक्रोश और प्रतिवाद की सृजनात्मक परिणति

□ डॉ० वेद प्रकाश अमिताभ

अपनी लंबी कविताओं के इस संग्रह की 'कविताओं से पहले' शीर्षक भूमिका में नरेन्द्र मोहन ने स्पष्ट तौर पर लिखा है—' किसी कवि द्वारा लंबी कविता लिखा जाना यह गारंटी नहीं है कि वह कविता सार्थक कविता है और वह बड़ा कवि है। सृजनात्मकता हर तरह की कविता की पहली शर्त है—लंबी हो या छोटी। हां, यह जरूर है कि लंबी कविताओं के लिये सृजनात्मकता के साथ-साथ अनुभव की बड़ी पूंजी और प्रतिभा भी दरकार है।" 'संकट दृश्य का नहीं' में नरेन्द्र मोहन की तीन लंबी कविताएं—'एक अग्निकांड जगहें बदलता', 'एक अदद सपने के लिए', 'खरगोश चित्र और नीला घोड़ा'—संकलित हैं। इन कविताओं से गुजरते हुए यह देखना महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है कि इनमें सृजनात्मकता की कौंध कहां-कहां है, कवि का अनुभव-क्षेत्र कितना विराट या सीमित है और 'लंबी कविता' में वांछित बिम्ब और विचार का तनाव कितने सलीके से इन कविताओं में व्यक्त हुआ है? नरेन्द्र मोहन की ये कविताएं पर्याप्त चर्चित रही हैं। इन पर काफी कुछ कहा और लिखा जा चुका है। यह संग्रह इनके एक साथ विवेचन और मूल्यांकन का अवसर प्रदान करता है।

नरेन्द्र मोहन के विचार में 'लंबी कविता' की दीर्घता किसी केन्द्रीय स्थिति पर निर्भर होती है (लंबी कविताओं का रचना-विधान' पृ० 2)। इन तीनों कविताओं के मूल में एक

हादसा है। ऐतिहासिक हादसा, देश के विभाजन का हादसा। जो प्रकारान्तर से मूल्यों और सपनों के बरबाद होने का हादसा था। आज़ादी के बाद इस हादसे के बोये बीजों के वृक्ष फलते-फूलते रहे हैं और सम्प्रदाय द्वेष, आतंकवाद आदि नयी-नयी शक्लों में सामने आते रहे हैं। 'एक अग्निकांड जगहें बदलता', में हादसे की भयावहता 'राख', 'दफन' जैसे पदों से व्यंजित है—'उसके सामने का लहलहाता पेड़/जल कर राख हो गया था/हंसते खिलखिलाते मुहल्लों में/सन्नाटे की चट्टान आ गिरी थी। और सभी कुछ दफन हो गया सा लगता था।' 'एक सपने के लिए' में 'याद में कुंडलीबद्ध है एक आतंक' कहते हुए विभीषिका से इन शब्दों में साक्षात्कार किया गया है—'कहां से आ गिरी है लाश/बीच चौराहे में/कहां से आ रही हैं गोलियां।' हालांकि 'खरगोश चित्र और नीला घोड़ा' को नरेन्द्र मोहन पहली दोनों कविताओं से वस्तु और शिल्प के धरातल पर अलहदा मानते हैं, प्रेम के अनुभव पर लिखी लंबी कविता के रूप में इसकी शिनाख्त करते हैं, लेकिन सुचित्रा-सलमान की यह कहानी भी 'लाश' 'राख' 'कफन', 'सन्नाटे' को जन्म देने वाले हादसे पर ही केन्द्रित है। यह हादसा आदमकद लोगों को जिन्दा जलाती आग/और जलाने का जश्न मनाती खूंखार टोली...' से सम्बद्ध है। इस लम्बी कविता में प्रेम उतना नहीं उभरता, जितनी उस हादसे की दहशत। नरेन्द्र मोहन की काव्य-संवेदना इतिहास से होती हुई, अपने वर्तमान अनुभवों की जमीन पर अपने समय के खौफनाक और शर्मनाक हादसों को केन्द्र में रखती हुई भी कालांकित नहीं होती है। वह घटनाओं, अनुभवों और शब्दों को वृहत्तर अर्थछवियों और संकेतों में रूपांतरित करने में सक्षम है। खरगोश-चित्र और नीला घोड़ा' में सुचित्रा का कथन—'दहला देता कोई हादसा/लिखती हूं तब', नरेन्द्र मोहन की रचना प्रक्रिया का भी प्रस्थान बिन्दु जान पड़ता है।

नरेन्द्र मोहन की इन लंबी कविताओं में 'सन्नाटा', 'चुप्पी', 'अंधेरा', 'लाश' आदि पद और प्रतीक यदि हादसे की भयावहता के व्यंजक हैं तो 'चीख', 'हंसी', 'आग' यथास्थिति को तोड़ने और विसंगति, अव्यवस्था का प्रतिवाद करने की सूचना देती है। 'चुप्पी में घिरे-घिरे मरूं' यह स्थिति कवि को काम्य नहीं है। 'एक अग्निकांड जगहें बदलता' में नंगी बेलौस और खतरनाक हंसी की जरूरत इसी लिए है कि सार्थक और परिवर्तनकामी मूल्यों की द्योतक है—

> हंसी जो एक चेतना सी जज्ब हो जाती है चीजों में
> चीजों का हिस्सा बन और छा जाती है सभी पर एक जुनून सी
> इजहार करती जीवन से बड़े मूल्य की कल्पना का

अपने अनुभवों को सृजनात्मक रूप देने के क्रम में नरेन्द्र मोहन ने अनेक बिम्बों और अप्रस्तुतों का सहज और सार्थक समावेश इन कविताओं में किया है। 'एक अग्निकांड जगहें बदलता' की अन्तर्वस्तु देश-विभाजन के बाद यूसुफ जैसे संवेदनशील व्यक्तियों की नियति से सम्बद्ध है, अतः विभीषिका को मूर्त्त करने के लिए मंटो का 'टोबा टेक सिंह' सार्थक प्रतीक है—'बड़बड़ाता और औंधे मुंह गिरा टोबा टेक सिंह/ढेर हो गया था वहीं।' इसकी तुलना में 'एक अदद सपने के लिये' में 'किला' व्यवस्था की दुर्भेद्यता और अमानवीयता का प्रतीक बन कर आया है, जहां लाशों को वोटों में, वोटों को लाशों में बदलने का उपक्रम चलता रहता है। 'खरगोश चित्र और नीला घोड़ा' में 'ज्वालामुखी' का सन्दर्भ सृजनात्मक है। सुचित्रा के विद्रोह भाव और संघर्ष-चेतना को अभिव्यक्त करने की दृष्टि से यह पर्याप्त महत्वपूर्ण और गौरतलब है। सुचित्रा की कविताओं में सरक आता 'ज्वालामुखी' स्वयं

नरेन्द्र मोहन की कविताओं में भी अपने बहते लावे के साथ उपस्थित होता दिखाई देता है। ज्वालामुखी अर्थात् एक बड़े परिवर्तन या विद्रोह की संभावना से इन कविताओं का वैचारिक पक्ष दीप्त और ऊर्जावान् हुआ है। तीनों कविताओं के अंत में 'आग' की उपस्थिति बदलाव की बेचैनी, कोशिश और सकारात्मक आक्रोश का पर्याय बन गयी है। 'एक अग्निकांड जगहें बदलता' के अन्त में जुलूस-संगठित प्रतिवाद, का नेतृत्व उस नौजवान के द्वारा हो रहा है जिसकी आंखों में 'आग' है। 'एक अदद सपने के लिये' के समापन-चरण में 'नाग यज्ञ' की जरूरत जतायी गयी है। 'खरगोश-चित्र और नीला घोड़ा' की अंतिम पंक्तियां इस प्रकार हैं—

सुचित्रा और सलमान झांकते हैं
एक दूसरे की आंखों में
कचरे को जलाती एक लपट दोनों तरफ

यह 'लपट' अवमूल्यों और नकारात्मक शक्तियों के लिये गंभीर चुनौती है और इसका स्पष्ट मकसद यह है कि कोई खरगोश फिर लहुलुहान न हो, फिर से देश की धरती पर गुलाब की खेती हो, तरह-तरह के सांप किसी के बदन, सपने और आत्मा को न डस सकें। 'कंट्रास्ट' दर्शाने वाले सांप-गुलाब, चुप्पी-हंसी, सन्नाटा-चीख आदि की बुनावट से जहां बिम्ब और विचार का तनाव साफ तौर पर महसूस होता है वहीं कवि की सोद्देश्य और सकारात्मक मूल्य-दृष्टि भी उजागर होती है। तीनों कविताओं में व्यवस्था के प्रति आक्रोश तीक्ष्ण है। लेकिन यह आक्रोश न तो आत्महंता अनास्था के रूप में विस्तार पाता है और न मात्र निषेधवादी विचार के रूप में काव्य में संश्लिष्ट हुआ है। यह आक्रोश स्थितियों की समझ और उनके संतुलित विश्लेषण से जन्मा और परिवर्तन की शुभाकांक्षा से प्रेरित और पोषित है। इन कविताओं में मंटो, अमृता प्रीतम, फहमीदा रियाज, दशम ग्रंथ आदि के विचारों को स्थितियों के अनुरूप प्रयुक्त और व्याख्यायित किया गया है। हालांकि ये संदर्भ सामान्य पाठक के लिए भारी पड़ते हैं, लेकिन उर्दू-पंजाबी-हिन्दी साहित्य के संस्कारों से अवगत पाठक के लिए ये संदर्भ दूरगामी व्यंजनाओं के परिचायक बन जाते हैं। 'लंबी कविता' के प्रायः बहुत वाचाल और सपाट हो जाने का खतरा बना रहता है। लेकिन नरेन्द्र मोहन की ये तीनों लंबी कविताएं न तो अनावश्यक स्फीति-दोष से ग्रस्त हैं और न इनमें स्थितियों, विचारों और बिम्बों की बनावट सपाट रूप में है। जिस सृजनात्मकता को नरेन्द्र मोहन लंबी कविता के लिए अनिवार्य मानते हैं, वह 'संकट दृश्य का नहीं' में संवेदनशीलता, वैचारिक प्रखरता, शब्द-चयन, वर्तुल कथन-पद्धति आदि के संश्लिष्ट रूप में विद्यमान है। ⊡

इस अंक के लेखक

1. आशा रानी व्होरा
   स० 302 सेक्टर 22
   नोएडा—201301
2. मोतीलाल साक़ी
   कल्चरल अकादमी
   जम्मू।
3. अर्जुन देव मजबूर
   वार्ड नं० 12
   तालाब सैलियां रोड
   गढ़ी उधमपुर
4. डॉ० प्रेमसिंह जीना
   केन्द्रीय बौद्ध शिक्षा संस्थान
   लेह (लद्दाख)
5. पूरन सरमा
   124-61-62 अग्रवाल फार्म
   मानसरोवर जयपुर
   302020
6. डॉ० देवव्रत जोशी
   24 वेदव्यास कालोनी
   रतलाम (म० प्र०)

7. प्रेम विज

746-सैक्टर 8-बी

चण्डीगढ़ 160018

8. यादवेन्द्र शर्मा

सम्पादक 'धार'

सुन्दर नगर—1-174401

हि० प्र०

9. द्विजेन्द्र द्विज

प्राध्यापक

राजकीय पोलिटेक्निक कालेज

हमीरपुर 77030 हि० प्र०

10. डॉ० ए० अरविंदाक्षण

हिन्दी विभाग

कोचीन विश्वविद्यालय

कोचीन – 682022

11. भगवान देव 'चैतन्य'

90-एस-3-सुन्दर नगर

174402 हि० प्र०

12. नीलम महाजन

सुशील निवास

हरिसिंह नगर

कोटली बस्ती, जम्मू

13. महाराज कृष्ण सन्तोषी

दूर संचार विभाग

कच्ची छावनी

जम्मू ।

14. सुजाता

14-A/D गांधी नगर

जम्मू ।

15. किरण बख्शी

मुहल्ला अफगानां

जम्मू ।

16. अमरेन्द्र मिश्र
गगनांचल
आई० सी० सी० आर०
आई० पी० इस्टेट, नई दिल्ली-2

17. आर्य यज्ञदत्त
सिंडीकेट बैंक भुवनेश्वर-7

18. डॉ० अजीत प्रसाद महापात्र ।
द्वारा आर्ययज्ञ दत्त
सिंडीकेट बैंक भुवनेश्वर-7

19. पंकज शुक्ल
12—जिन्सी रोड भोपाल,
462008 म० प्र०

20. डॉ० आदर्श
25-एम० आई० जी० कालोनी
उधमपुर, (जम्मू-कश्मीर)

□

चिट्ठी पन्ना—

शीराज़ा के ताज़ा अंक पाकर प्रसन्नता हुई, साहित्य-संस्कृति-कला का सुन्दर समन्वय ऐसी पत्रिका ! और इतनी सस्ती ! आपका श्रम सार्थक है बधाई ।

शंकर पांडेय, मुरादाबाद

शीराज़ा के अंक मिले । अहिन्दी भाषी क्षेत्र से निकलने वाली सरकारी पत्रिका में उपलब्ध रचनात्मक सामग्री से अभिभूत हुआ ।

मेरी शुभकामनाएं

अजयन सौरभ, पटना

शीराज़ा सदैव नवीनतम संस्कृतियों की बोध पत्रिका अनुभूत हुई है। सामग्री में विविधता और सुरुचि पाठकों को सहज आकर्षित करती है ।

शुभकामनाएं

प्रद्युम्न दास, वैष्णव, उड़ीसा

शीराज़ा के वर्तमान सम्पादन में एकरसता अवश्य टूटी है : प्रगति तय है ।

फूलचन्द मानव, मोहाली

शीराज़ा जनवरी 94 का अंक मिला, कवि किशन सरोज से रामेश्वर काम्बोज हिमांशु का साक्षात्कार, तेज बहादुर की कहानी 'सन्तोष', डॉ० माहेश्वर तिवारी और द्विजेन्द्र द्विज की रचनाएं प्रिय लगीं ।

सुमीत चक्रवर्ती, पुणे

इधर शीराज़ा का एक अंक देखा । जम्मू-कश्मीर से प्रकाशित हो रही सरकारी पत्रिका ऐसी पठनीय पाकर सुखद आश्चर्य हुआ । बधाई !

शबीर हसन, धनबाद (बिहार)

आज जबकि पत्रिकाएं बस बंद ही बंद हैं साहित्य जगत में शीराज़ा की भूमिका सराहनीय है । नये अंक में प्रकाशित आलेख, कश्मीरी लोक संगीत एवं लोकवाद्य, नृत्य, चित्रकला : कलात्मक जुड़ाव, मनोज शर्मा की कहानी, 'ऐसा कुछ नहीं' । व्यंग्य, विचार-गोष्ठी और भागीरथ भार्गव, द्विजेन्द्र द्विज की कविताएं पसन्द आईं ।

अनन्त कुम्भज, अल्मोड़ा

शीराज़ा में विविधता और रोचकता पाकर प्रसन्नता होती है । 'संवाद' में दरअसल आप ज़िन्दगी से सरोकारों का दस्तावेज़ छाप रही हैं । 'भाषांतर' के तहत दूसरी कहानियां भी पढ़ने को मिल रही हैं । एक समय से शीराजा में यह कमी देखने में आ रही थी । कविताएं सुन्दर होती हैं । पहले कविताएं ही पढ़ने बैठता हूं ।

धनंजय भट्ट, जगाधरी (पंजाब)